तिरुमल तिरुपति देवस्थान

सप्तगिरि

सचित्र मासिक पत्रिका

मई - 2019, रु. 5/-

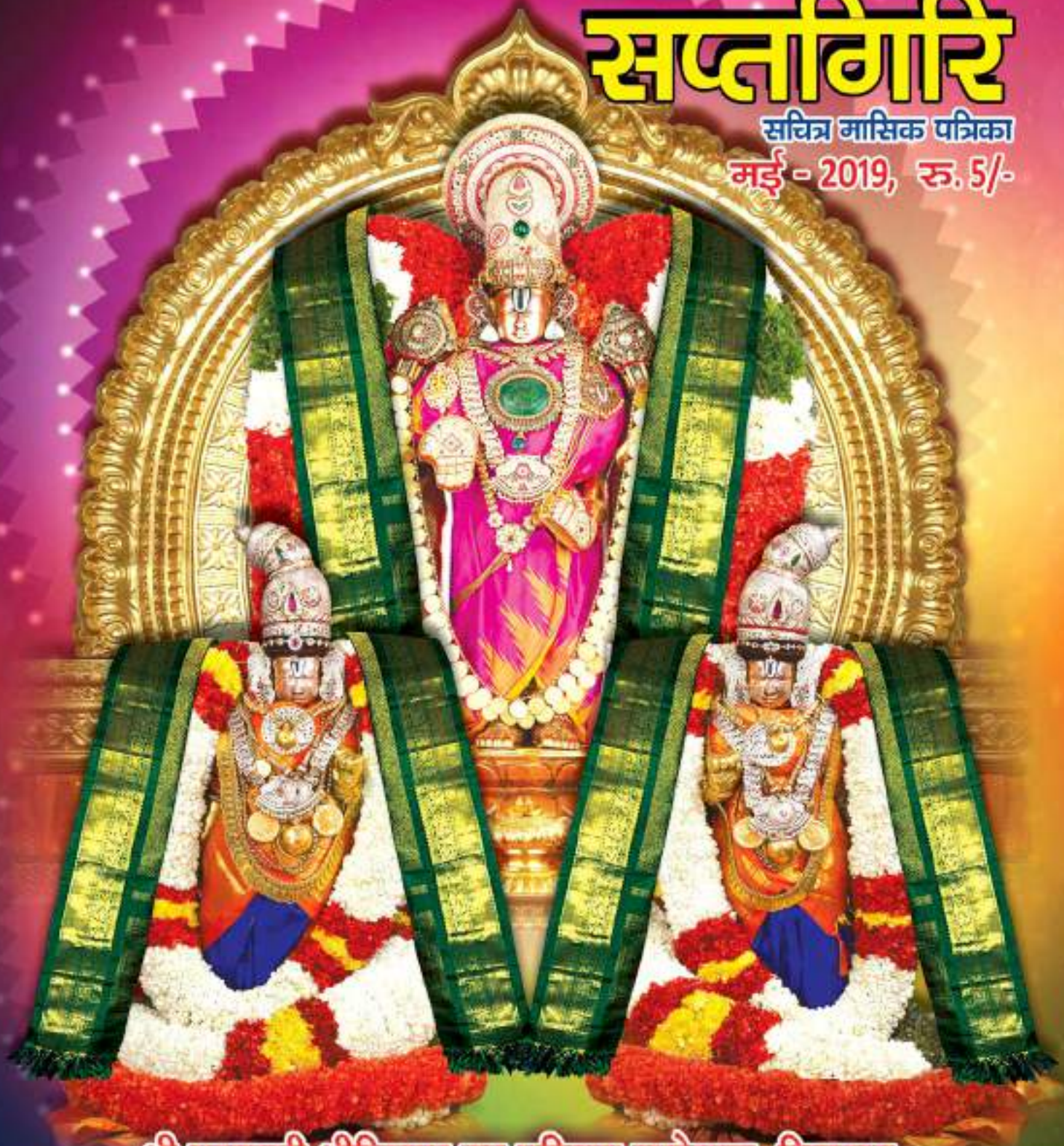

श्री पद्मावती श्रीनिवास का परिणय महोत्सव, तिरुमल

दि. १३.०५.२०१९ से दि. १५.०५.२०१९ तक

(वैशाख शुद्ध नवमी, दशमी, एकादशी को मनाया जाएगा)

तिरुमल तिरुपति देवस्थान

तिरुपति श्री गोविंदराजस्वामीजी का ब्रह्मोत्सव

दि. ११-०५-२०११ से दि. १९-०५-२०११ तक

११-०५-२०११ शनिवार
दिन - ध्वजारोहण
रात - महाशेषवाहन

१२-०५-२०११ रविवार
दिन - लघुशेषवाहन
रात - हंसवाहन

१३-०५-२०११ सोमवार
दिन - सिंहवाहन
रात - मोतीवितानवाहन

१४-०५-२०११ मंगलवार
दिन - कल्पवृक्षवाहन
रात - सर्वभूपालवाहन

१५-०५-२०११ बुधवार
दिन - पालकी में गोदिनी अवतारोत्सव
रात - गरुडवाहन

१६-०५-२०११ गुरुवार
दिन - हनुमद्वाहन
सायं - वसंतोत्सव
रात - गजवाहन

१७-०५-२०११ शुक्रवार
दिन - सूर्यप्रभावाहन
रात - चंद्रप्रभावाहन

१८-०५-२०११ शनिवार
दिन - रथ-यात्रा
रात - अश्ववाहन

१९-०५-२०११ रविवार
दिन - चक्रस्नान
रात - ध्वजावरोहण

यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः।
न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परां गतिम्

(- श्रीमद्भगवद्गीता १६-२३)

और जो पुरुष शास्त्र की विधि को त्यागकर अपनी इच्छा से बर्तता है, वह न तो सिद्धि को प्राप्त होता है और न परमगति को तथा न सुख को ही प्राप्त होता है।

गोपालो बाल कृष्णोऽपि नारद धृव पार्षदैः।
सहायो जायते शीघ्रं यत्र गीता प्रवर्तते॥

(- गीता मकरंद, गीता की महिमा)

जहाँ गीता का पठन होता रहता हैं वहाँ गोप बालक श्रीकृष्ण, नारद, धृव आदि पार्षदों के साथ सहायता पहुँचाने के निमित्त आ जाते हैं।

(गतांक से)

श्री रामानुज नूट्रन्दादि

मूल - श्रीरंगामृत कवि विरचित | प्रेषक - श्री श्रीराम मालपाणी

न यवे नोरुदेय्वम् नानिलत्ते, शिल मानिड त्तै
प्पुयलेयेन क्कवि पोत्तिशेय्येन्, पोन्नरङ्ग मेन्निल्
मयले पेरुहु मिरामानुजन् मन्नु मामलर्त्ताळ्
अयरेन्, अरुविनै येन्नै येव्वारि न्नडर्प्पदुवे॥३५॥

देवतान्तरप्रावण्यं नोद्वहामि; क्षुद्रमानुषेषु असदौदार्यमारोप्य कवितारचनायां न तत्परोऽस्मि। श्रीरङ्गशब्दश्रवणमात्र एव व्यामुह्यतो भगवतो रामानुजस्य पादारविन्दस्मरणं क्षणमात्रमपि न जहामि। इतश्च, प्रबलान्यपि पातकानि कथं नु मामभिभवेयुः?॥

मैं तो दूसरे किसी देव का भक्त न बनूँगा, क्षुद्र मानवों की, 'हे मेघ के सदृश वर्षण करने वाले!' इत्यादि मिथ्यास्तुति नहीं करूँगा; और 'श्रीरंग' शब्द सुनने मात्र से उस पर व्यामोहित होनेवाले श्रीरामानुजस्वामीजी के सुंदर पादारविंदों को नहीं भूलूंगा। अतः प्रबल पाप मुझको कैसे घेर सकेंगे? (पूर्वगाथोक्त प्रकार मेरे पूर्वकाल के सभी पाप नष्ठ हो गये; और भविष्यत् में भी पाप न लगेंगे; क्योंकि मैंने देवतांतरप्रावण्य, क्षुद्रमानवस्तुति इत्यादि अकार्यों से दूर होकर श्रीरामानुजस्वामीजी के पादारविंदों का आश्रय लिया।

(क्रमशः)

सप्तगिरि

वेङ्कटाद्रिसमं स्थानं ब्रह्माण्डे नास्ति किञ्चन,
वेङ्कटेश समो देवो न भूतो न भविष्यति।

तिरुमल तिरुपति देवस्थान की
सचित्र मासिक पत्रिका

वर्ष-४९ मई-२०१९ अंक-१२

विषयसूची

श्री रामानुज नूट्रन्दादि	श्री श्रीराम मालपाणी	04
श्री आन्ध्रपूर्ण स्वामीजी	श्री गोविंद मधुसूदन रांदड	07
''अक्षयतृतीया की महिमा''	श्रीमती प्रीति ज्योतीन्द्र अजवालिया	10
सिंहाचलम महान पुण्यक्षेत्र	डॉ.एस.पी.वरलक्ष्मी	13
श्री गंगाजी की महिमा	डॉ.विजय प्रकाश त्रिपाठी	15
भगवान परशुराम से विनय	श्रीमती रमन त्रिपाठी	17
श्री रामानुजाचार्य नाम वैभव	श्री केशव रांदड	18
मंगलगिरि श्री लक्ष्मी नरसिंह स्वामी	डॉ.जी.मोहन नायुडु	21
दैव योगिनी वेंगमाम्बा	श्री के.रामनाथन	23
श्री कूर्मावतार	डॉ.के.एम.भवानी	25
श्री वेदव्यास भट्टर	श्रीमती शिल्पा केशव रांदड	31
श्री दाशरथि स्वामीजी	श्री चन्द्रकान्त घनश्याम लहोती	34
भारत के प्रसिद्ध १६ हनुमान मंदिर	श्री ज्योतीन्द्र के. अजवालिया	37
भागवत कथा सागर - दक्ष के यज्ञ का विध्वंस	श्री अमोघ गौराँग दास	39
शरणागति मीमांसा	श्री कमलकिशोर हि तापडिया	42
सफलता की जीवनरेखा	श्री अमोघ गौराँग दास	44
श्री पद्मावती श्रीनिवास का परिणयोत्सव वैभव	श्री पी.वी.लक्ष्मीनारायण	46
श्री अलघु मल्लारि कृष्णस्वामी मंदिर - मन्नार पोलूर	डॉ.बी.के.माधवी	50
राशिफल	डॉ.केशव मिश्र	53

गौरव संपादक
श्री अनिलकुमार सिंघाल, आई.ए.एस्.,
कार्यनिर्वहणाधिकारी, ति.ति.दे.

प्रधान संपादक
डॉ.के.राधारमण

संपादक
डॉ.वी.जी.चोक्कलिंगम

उपसंपादक
श्रीमती एन.मनोरमा

मुद्रक
श्री आर.वी.विजयकुमार, बी.ए., बी.एड्.,
उपकार्यनिर्वहणाधिकारी,
(प्रचुरण व मुद्रणालय),
ति.ति.दे. मुद्रणालय, तिरुपति।

श्री पी.शिवप्रसाद,
सेवानिवृत्त चित्रकार, ति.ति.दे., तिरुपति।

स्थिरचित्र
श्री पी.एन.शेखर, छायाचित्रकार, ति.ति.दे., तिरुपति।

श्री बी.वेंकटरमण, सहायक चित्रकार, ति.ति.दे., तिरुपति।

मुखचित्र
श्री पद्मावती श्रीनिवास का परिणयोत्सव, तिरुमल।
चौथा कवर पृष्ठ
उभयदेवेरियों के साथ श्री गोविंदराजस्वामीजी, तिरुपति।

सूचना

मुद्रित रचनाओं में व्यक्त किये विचार लेखक के हैं। उनके लिए हम जिम्मेदार नहीं हैं।

– प्रधान संपादक

अन्य विवरण के लिए:
CHIEF EDITOR, SAPTHAGIRI, TIRUPATI - 517 507.
Ph.0877-2264543, 2264359, 2264360.

website: www.tirumala.org or www.tirupati.org वेबसैट के द्वारा सप्तगिरि पढ़ने की सुविधा पाठकों को दी जाती है। सूचना, सुझाव, शिकायतों के लिए - sapthagiri_helpdesk@tirumala.org

जीवन चंदा .. रु.500-00
वार्षिक चंदा .. रु.60-00
एक प्रति .. रु.05-00
विदेशियों को वार्षिक चंदा .. रु.850-00

संपादकीय

नम्माल्वार प्रपत्ति मार्ग में...

''वृषभेतु विशाखायां कुरुकापुर कारिणम्।
पाण्ड्यदेशे कलेरादौ शठारिं शैन्यपं भजेः।।''

नम्माल्वार का जन्म प्रमादिनाम वर्ष के वृषभ माह में, विशाखा नक्षत्र में, शुक्ल चतुर्थि शुक्रवार के दिन, पाण्ड्य देश में ''विश्वक्सेन'' के अंश में हुआ। इनको मारन्, शठारि, शठरिप, शठकोपि, परांकुशमुनि, यतीन्द्र आदि कई उपाधियाँ हैं। इनके द्वारा लिखीगयी १०० पाशुरों का 'तिरुविरुत्तम्', ७ पाशुरों का 'तिरुवाशिरियम्', ८७ पाशुरों का 'पेरियतिरुवंदादि', ११०२ पाशुरों का 'तिरुवाय्मोलि' आदि प्रबंधों में ८७ पाशुरों का 'पेरियतिरुवंदादि' प्रबन्ध को तिरुमल स्वामीजी के ब्रह्मोत्सवों में, हनुमंतवाहन सेवा तथा गजवाहन सेवाओं के दिन, १०० पाशुरों का 'तिरुविरुत्तम्' प्रबन्ध को मोहिनी अवतार के दिन तथा गरुडवाहन सेवा के दिन पाठ किया जाता है।

इनके माता-पिता उदयनंगै तथा कारी थे। वे अपने बेटे को 'मारन्' (मन्मथ) नाम से नामांकित किया। वे जन्म के तुरन्त बाद भगवान का ध्यान करते हुए समाधि की स्थिति में चले गये। वे पैदा होकर रोये नही तथा माँ का दूध भी नही पिया। कारी दंपतियों ने बिना हिले-डुले बच्चों को लेकर उनके गाँव में स्थित आदिनाथस्वामी मंदिर को जाकर प्रार्थना की। ऐसा करने पर भी बच्चे की हालत में सुधार न होने पर दंपतियों ने सामने स्थित इमली के पेड पर बाँधी झूले में बच्चे को छोडकर चले गये। बिना खाने-पीने के बावजूद 'मारन्' दिनदिनाभिवृद्धि हुए है। ऐसे आठसाल बीत गये। बालकृष्ण जैसा दिखनेवाले 'मारन्' को देखकर भक्तजन अत्यन्त प्रेम से भगवान की सेवा में समर्पित गये 'पोगड' फूलों की माला को उनके सिर पर सजाया। कभी न मुरसानेवाले पोगडफूलों की माला का धारण करने के कारण उनको 'वकुलाभरण' नाम प्राप्त हुआ। आदिनाथस्वामी ने स्वयं ही कहा कि - ''वे हमारे आल्वार' हुए। तमिल में 'नम्मा' का आर्थ है 'हमारे', 'आल्वार' माने परिवार का सदस्य है। हमारे आल्वार का अर्थ है हमारे परिवार का सदस्य। भगवान की कृपा कटाक्ष से 'नम्माल्वार' बडे हुए। नम्माल्वार ने भगवान को ही अपनी 'माता' के रूप में माना। भगवान ही अपने प्रति विश्वास रखनेवाले 'नम्माल्वार' का जनपोषण सामान्य भोजन के बजाय, अपने अमृतप्राय कृपाकटाक्ष से किया। नम्माल्वार की वजह से ही महाभागवत का धर्म मानेजाने वाला 'प्रपत्तिमार्ग' (शरणागति) ही श्रीवैष्णव संप्रदाय का केंद्र बन गया है।

नम्माल्वार १६ सालों से पेड के नीचे ही बिना खान-पान के, भगवान का गुणगान करते हुए योग में ही रहे। इनके सहज ज्ञान तपोवैराग्य भक्ति प्रपत्ति की सराहना करते हुए दिव्यदेशों के सभी अर्चामूर्ति प्रकट हुए। इमली के पेडे को कभी न छोड के जानेवाले नम्माल्वार, दिव्यदेशों के दिव्य मंगल मूर्तियों को तमिल भाषा में दिव्य तथा मधुर कविताओं से वर्ण किया। यह भागवत् दर्शन के अनुभव का वर्णन ही ''तिरुवाय्मोलि'' नामक प्रबन्ध के रूप में विराजमान है। वे अपने ३६ साल की उम्र में अपने अवतार समाप्ति करके, परमपद प्राप्त की।

इनके वार्षिक तिरुनक्षत्र के संदर्भ में उनके जन्म तिथि के दस दिन पहले ही उनके उत्सव प्रारंभ होते हैं। जन्म तिथि के दिन ''सात्तुमोरा'' मनाई जाती है। उस समय के अनुसार ति.ति.देवस्थान वाले इस महीने के ९ तारीख से १८ तारीख तक ''नम्माल्वार'' के उत्सव अत्यन्त धूमधाम से मनाते है। अंतिम दिन ''सात्तुमोरा सेवा'' मनाई जाती है। इस शुभ संदर्भ में हम सभी अपने ''आल्वार'' की प्रार्थना करके, उनके प्रति अपने भक्ति भाव प्रकट करें...

''श्रीनम्माल्वार दिव्यतिरुवडिगले शरणम्''

श्री आन्ध्रपूर्ण स्वामीजी

- श्री गोविंद मधुसूदन रांदड

अवतार तनियन

चैत्रेश्विनी समुद्भुतं सालग्राम प्रतिष्ठितम्।
यतीन्द्र पादुका तीर्थं आन्ध्रपूर्णमहं भजे।।

जन्मनक्षत्र - चैत्र, अश्विनी नक्षत्र

अवतार स्थल - सालग्राम (कर्नाटक)

आचार्य - श्रीरामानुजस्वामीजी

परमपद प्राप्त स्थल - सालग्राम

ग्रन्थ रचना सूची - यतिराज वैभव,
रामानुज अष्ठोत्तर शत नामावली।

तमिल नाम - वडुग नम्बि

श्रीरामानुजस्वामीजी तिरुनारायणपुरम् की यात्रा के दौरान, मिथिलापुरी सालग्राम पहुँचते हैं, जहाँ वह दाशरथि स्वामीजी को निर्देश देते हैं कि वे स्थानीय नदी को अपने चरण कमलों से स्पर्श करें। दाशरथि स्वामीजी के चरण कमलों की पवित्रता से, जिन स्थानीय लोगों ने उस नदी में स्नान किया वे भी पवित्र हुए और श्रीरामानुजस्वामीजी के शिष्य हो गये। उन्हीं में से एक थे वडुग नम्बि, जिन्हें आंध्रपूर्ण नाम से भी जाना जाता है। श्रीरामानुजस्वामीजी, अपनी निर्हेतुक दया से वडुग नम्बि का उद्धार करते हैं, उन्हें हमारे संप्रदाय के सबसे महत्वपूर्ण सिद्धांत सिखाते हैं और उन्हें आचार्य निष्ठा में पूर्णतः स्थापित करते हैं। और उसके बाद वडुग नम्बि श्रीरामानुजस्वामीजी से कभी अलग नहीं हुए।

वडुग नम्बि पूर्ण रूप से आचार्य निष्ठा में स्थित थे। वे श्रीरामानुजस्वामीजी की चरण पादुकाओं की प्रतिदिन आराधना किया करते थे और उसे ही उपयोपेय मानते थे। श्रीरामानुजस्वामीजी के शिष्यों में आन्ध्रपूर्ण स्वामीजी की आचार्य निष्ठा आदर्श एवं महान है।

वार्षिक तिरुनक्षत्र (४.५.२०१९) के संदर्भ में...

इष्ट देवता की भांति यतिराज की चरण पादुकाओं को ही परम आराध्य मानकर, स्वरचित अष्ठोत्तर शत नामों से उनकी प्रेम पूर्वक पूजा और अर्चना करते हुए उन्होंने इस कैंकर्य को ही मुक्ति का परम साधन माना।

श्री आन्ध्रपूर्ण स्वामीजी अपने आचार्य यतिराज के साथ जब भी श्रीरंगनाथ भगवान के दर्शन के लिए जाते थे तब वे भगवान के दर्शन न करके आचार्यनिष्ठा के कारण श्री यतिराज की ओर ही दर्शनार्थी बनकर देखते रहते थे।

श्री आन्ध्रपूर्णाचार्य नियमित रूप से यतिराज का शेष प्रसाद पाया करते थे और उसे पाने के बाद, सम्मान से वे अपने हाथ अपने मस्तक से पोंछ लिया करते थे (हाथों को जल से धोने के बजाये)। सामान्यतः भगवान/आचार्य, आल्वार का प्रसाद, जो अत्यंत पवित्र है, उसे पाने के पश्चात् हमें अपने हाथों को जल से नहीं धोना चाहिए, अपितु अपने हाथों को अपने मस्तक से पोंछना चाहिए। एक बार, यह देखकर यतिराज कुपित हो गए और आदेश दिये कि ''जाओ शीघ्र हाथ धोकर और शुद्ध होकर आओ। गुरुदेव के आदेश से आप हाथ धोकर आ गये।

अगले दिन, जब यतिराज को भगवत प्रसाद प्राप्त होता है, वे उसमें से थोडा पाकर, शेष आन्ध्रपूर्ण को प्रदान कर देते हैं। आन्ध्रपूर्णाचार्य उसे पाकर अपने हाथों को जल से धो लेते हैं। यतिराज फिर से अचंभित होकर आन्ध्रपूर्णाचार्य से पूछते हैं कि भगवत प्रसाद पाने के बाद उन्होंने अपने हाथों को क्यों धोया। वडुग नम्बि, बड़ी ही विनम्रता और सुंदरता से उत्तर देते हैं ''मैं तो केवल आपके द्वारा दिए हुए कल के निर्देश का पालन कर रहा हूँ।'' यतिराज कहते हैं ''आपने मुझे बड़ी सरलता से पराजित कर दिया'' और उनकी निष्ठा की सराहना करते हैं।

एक समय में श्री आन्ध्रपूर्ण स्वामीजी के घर पर उनके देह सम्बन्ध रखने वाले कुछ सम्बन्धी आये, जो श्रीवैष्णव नहीं थे। उन लोगों ने यहाँ पर दिन भर निवास किया। इनके जाने के पश्चात् आपने सारे घर को धोकर स्वच्छ किया उन अवैष्णवों के उपयोग में लाये गये घर के समस्त बर्तनों को अपवित्र समझकर अग्नि में शुद्ध किया। तत्पश्चात् आपने इस बात का पश्चात्ताप किया कि आचार्य सम्बन्ध हीन लोगों के संपर्क से घर और बर्तन सब अशुद्ध हो गये।

एक बार श्री यतिराज तिरुवनंतपुरम् जाते हैं और वहाँ अनंतशयनम् भगवान के मंदिर का आगमन बदलने के बारे में सोचते हैं। परंतु भगवान की योजना कुछ और ही थी। इसलिए जब यतिराज शयन करते हैं, भगवान उन्हें वहाँ से उठाकर तिरुक्कुरुन्गुडी दिव्यदेश पहुँचा देते हैं। यतिराज

प्रातः जागकर, पास की नदी में स्नान करके, द्वादश ऊर्ध्वपुण्ड्र लगाकर (१२ ऊर्ध्वपुण्ड्र) तिरुमण का शेष श्री आन्ध्रपूर्णाचार्य को प्रदान करने के लिए उन्हें पुकारते हैं (जो उस समय तिरुवनंतपुरम् में थे) तिरुक्कुरुन्गुडी नम्बि, स्वयं वडुग नम्बि का रूप लेकर उनके शेष तिरुमण (पवित्र मिट्टी) को स्वीकार करते हैं। तत्पश्चात् एम्पेरुमानार तिरुक्कुरुन्गुडी नम्बि को शिष्य रूप में स्वीकार करते हैं।

एक समय श्री आन्ध्रपूर्णाचार्य स्वामीजी यतिराज के लिए दूध गरम कर रहे थे। इतने में श्रीरंगनाथ भगवान कि सवारी वीथि में पधारी। मठ के सभी लोग भगवान के दर्शन के लिए बाहर आ गये, लेकिन आप नहीं आए। यह देखकर जब श्री यतिराज ने इसका तात्पर्य पूछा तो आपने कहा कि यदि मैं इस समय बाहर चला जाता हूँ तो मेरे भगवान की सेवा बिगड़ जाती है अर्थात् मेरे भगवान के लिए जो दूध गरम हो रहा है, वह उफनकर अग्नि में गिर जायेगा, इसलिए मैं भगवान की सवारी में नहीं गया। यतिराज इस विलक्षण उत्तर एवं उनकी गुरु भक्ति को देखकर संतुष्ट हो गये।

एक बार यतिराज के साथ यात्रा करते हुए, श्री आन्ध्रपूर्णाचार्य अपने अर्चा भगवान (श्री यतिराज) की पादुकायें उसी पेटी में लेकर चले जिसमें यतिराज के अर्चा भगवान विराजे थे। यह जानकार यतिराज बहुत अचंभित होते हैं और आन्ध्रपूर्णाचार्य से पूछते हैं कि उन्होंने ऐसा क्यों किया? आन्ध्रपूर्णाचार्य त्वरित उत्तर देते हैं ''मेरे आराध्य भगवान भी आपके आराध्य भगवान के समान ही श्रेष्ठ है, इसलिए आपके भगवान के साथ मेरे भगवान के होने में कुछ भी गलत नहीं है।''

श्री आन्ध्रपूर्ण स्वामीजी की रचनाएँ

श्री आन्ध्रपूर्ण स्वामीजी ने **यतिराज वैभवं** नामक एक सुंदर ग्रंथ कि रचना की। इस ग्रंथ में उन्होंने दर्शाया कि ७०० सन्यासी, १२००० श्रीवैष्णव और कई वैष्णव आदि, श्री यतिराज के अनुयायी थे और वे लोग सदा उनकी सेवा और पूजा किया करते थे।

हमारे पूर्वाचार्यों द्वारा यह स्थापित किया गया है कि जब हम आचार्य का पूजन करते हैं, भगवान का पूजन स्वतः ही हो जाता है। परन्तु जब हम भगवान की पूजा करते हैं, इसका मतलब यह नहीं कि हमनें अपने आचार्य का पूजन भी कर लिया। इसलिए, आचार्य की आराधना और उन पर पूर्ण निर्भरता हमारे संप्रदाय का सबसे अभीष्ट सिद्धांत है।

आचार्य निष्ठा के महान श्री आन्ध्रपूर्ण स्वामीजी ने मनुष्य जीवन के उद्धार के लिए, श्रीवैष्णव प्रपन्नों के प्राण स्वरूप **श्री रामानुज अष्टोत्तर शत नामावली** की रचना की। जो मनुष्य श्रद्धा के साथ अष्टोत्तर शत नामावली के १०८ नामों को पढ़ते और सुनते है उनके सभी मनोरथ पूर्ण होते है और अन्त में मोक्षधाम में जाते है।

श्री वरवरमुनि स्वामीजी समझाते हैं कि आन्ध्रपूर्ण स्वामीजी मधुरकवि आल्वार के समान थे जिनके लिए शठकोप स्वामीजी ही सब कुछ थे। कूरेश स्वामीजी और दाशरथि स्वामीजी पूर्ण रूप से श्रीरामानुजस्वामीजी के आश्रित/समर्पित थे - फिर भी समय समय पर वे भगवान का मंगलाशासन किया करते थे और इस क्रूर संसार को सहन करने में असमर्थ होने पर उनसे मोक्ष प्रदान करने की प्रार्थना करते थे। श्री आन्ध्रपूर्ण स्वामीजी ऐसे सदाचार्य निष्ठा थे जो सदाचार्य की सेवा को भगवान की सेवा से ज्यादा महत्व देते थे।

अंततः, आर्ति प्रबंध (पासुर ११) में, श्री वरवरमुनि स्वामीजी स्थापित करते हैं कि श्री आन्ध्रपूर्ण स्वामीजी का स्थान (आचार्य निष्ठा) ऐसा है, जिसे प्राप्त करने की उत्कृष्ट चाहना उनकी भी है और वे यतिराज से प्रार्थना करते हैं कि उन्हें भी श्री आन्ध्रपूर्णाचार्य के समान बनने का आशीर्वाद दे। श्री आन्ध्रपूर्णाचार्य की श्री यतिराज के प्रति इतनी अतुल्य श्रद्धा थी कि वे अलग से भगवान की पूजा में संलग्न नहीं होते थे।

हमारे पूर्वाचार्यों द्वारा यह स्थापित किया गया है कि जब हम आचार्य का पूजन करते हैं, भगवान का पूजन स्वतः ही हो जाता है। परन्तु जब हम भगवान की पूजा करते हैं, इसका मतलब यह नहीं कि हमनें अपने आचार्य का पूजन भी कर लिया। इसलिए, आचार्य की आराधना और उन पर पूर्ण निर्भरता हमारे संप्रदाय का सबसे अभीष्ट सिद्धांत है और श्री वरवरमुनि स्वामीजी दर्शाते हैं कि इसे श्री आन्ध्रपूर्ण स्वामीजी ने पूर्णतः प्रकट किया है।

इस तरह श्री आन्ध्रपूर्णाचार्य की आचार्य निष्ठा महान एवं विलक्षण थी और श्रीरामानुजस्वामीजी को बहुत प्रिय थे। वे अपने आचार्य यतिराज स्वामी का श्रीपाद तीर्थ ग्रहण किए बिना जल तक नहीं पीते थे और अन्य किसी का भी तीर्थ ग्रहण नहीं करते थे। वे अनन्य गुरुभक्त और आचार्यनिष्ठा महात्मा थे जिनके जीवन की प्रत्येक प्रवृत्ति आचार्य भक्ति से ओत-प्रोत रहती थी। हम सब उनके श्रीचरणकमलों में प्रार्थना करते हैं कि हम दासों को भी उनकी अंश मात्र भागवत निष्ठा की प्राप्ति हो।

सूचना

१. कल्याणकट्टा के कर्मचारियों को कोई भेंट मत दीजिए।

२. पानी को व्यर्थ न बहायें।

३. तीन मुट्ठिभर केश कटवाने के लिए कृपया ब्लेड मत लीजिए। केवल शिरोमुंडन करवानेवाले ही ब्लेड और चंदन लीजिए।

४. ब्लेड और चंदन श्रीहरि की संपदा है, व्यर्थ न करें।

५. जूते पहनकर अंदर प्रवेश करना मना है।

६. कल्याणकट्टा में छायाचित्र व वीडियो खींचना मना है।

"अक्षयतृतीया की महिमा"

- श्रीमती प्रीति ज्योतीन्द्र अजवालिया

भारतीय संस्कृति का एक महत्वपूर्ण दिन एवं पर्व याने के अक्षयतृतीया। इसे अखात्रीज, अक्षयतीज भी कहते है। वैशाख मास में शुक्लपक्ष की तृतीया तिथि को अक्षयतृतीया कहते है। पौराणिक ग्रंथों के अनुसार इस दिन जो भी शुभ कार्य किये जाते है, उनका अक्षय फल मिलता है। इसी कारण इसे अक्षयतृतीया कहा जाता है। वैसे तो सभी बारह महीना की शुक्ल पक्षीय तृतीया शुभ होती है, किंतु वैशाख माह की तिथि स्वयं सिद्ध मुहूर्तों में मानी गई है।

अक्षयतृतीया का महत्व

अक्षयतृतीया का सर्व सिद्ध मुहूर्त के रूप में विशेष महत्व है। मान्यता है कि इस दिन बिना कोई पंचांग देखे कोई भी शुभ व मांगलिक कार्य जैसे विवाह, गृहप्रवेश, वस्त्र, आभूषण की खरीदारी या घर, भूखंड, वाहन आदी की खरीदारी से संबंधित कार्य किये जा सकते है। नवीन वस्त्र, आभूषण आदि धारण करने और नई संस्था, कार्यालय आदि की स्थापना या उद्घाटन का कार्य श्रेष्ठ माना जाता है। पुराणों में लिखा है कि इस दिन पितरों को दिया गया तर्पण तथा पिंडदान अथवा किसी और प्रकार का दान, अक्षय फल प्रदान करता है। इस दिन गंगास्नान करने से तथा भगवत पूजन से समस्त पाप नष्ट हो जाते है। यहाँ तक इस दिन किया गया जप, तप, हवन, स्वाध्याय और दान भी अक्षय हो जाता है। यह तिथि यदि सोमवार तथा रोहिणी नक्षत्र के दिन आये तो इस दिन किये गए दान, जप, तप - पुण्य का फल बहुत ही अधिक बढ जाता है। इस के अतिरिक्त यह तृतीया मध्याह्न से पहले शुरू होकर प्रदोषकाल तक रहे तो बहुत ही श्रेष्ठ मानी जाती है। यह भी माना जाता है कि आज के दिन मनुष्य अपने या स्वजनों द्वारा किये गये, जाने - अन्जाने अपराधों को सच्चे मन से ईश्वर से क्षमा प्रार्थना करे तो भगवान उस के अपराधों को क्षमा कर देते है, और उसे सद्गुण प्रदान करते है, अतः आज के दिन अपने दुर्गुणों को भगवान के चरणों में सदा के लिये अर्पित कर उनसे सद्गुणों का वरदान मांगने की परंपरा भी है।

अक्षयतृतीया के पीछे कई सारी मान्यताएँ

अखात्रीज के पीछे कई मान्यताएँ हैं, कुछ इसे भगवान विष्णु के जन्म से जुडती है, तो कुछ भगवान श्रीकृष्ण की लीला से, सभी मान्यताएँ आस्था से जूडी होने के साथ-साथ बहुत रोचक भी है।

१. यह दिन पृथ्वी के रक्षक विष्णुजी को समर्पित है। हिन्दु धर्म की मान्यता के अनुसार श्रीहरि विष्णु ने श्री परशुराम के रूप में धरती पर अवतार लिया था। धार्मिक मान्यता के अनुसार श्रीहरि विष्णु त्रेता एवं द्वापरयुग तक पृथ्वी पर चिरंजीवी (अमर) रहे।

अक्षयतृतीया (७.०५.२०१९) के संदर्भ में...

२. दूसरी मान्यता के अनुसार त्रेतायुग के शुरू होने पर धरती की सबसे पावन माने जानी वाली गंगा नदी इसी दिन स्वर्ग से धरती पर आई। इसीलिये इस दिन गंगा नदी में स्नान करने का अधिक महत्व बताया है।

३. यह दिन रसोई एवं पाक (भोजन) की देवी माँ अन्नपूर्णा का प्रादुर्भाव हुआ था। इसीलिये अक्षयतृतीया के दिन माँ अन्नपूर्णा का भी पूजन किया जाता है।

४. दक्षिण प्रांत में इस दिन की अलग ही मान्यता है, उन के अनुसार इस दिन कुबेर (भगवान के दरबार का खजानची) ने शिवपुरम् नामक जगह पर शिव की आराधना कर उन्हें प्रसन्न किया था। कुबेर की तपस्या से प्रसन्न हो कर शिवजी ने कुबेर से वर माँगने को कहा। कुबेर ने अपना धन एवं संपत्ति लक्ष्मीजी से पुनः प्राप्त करने का वरदान माँगा। तभी शिवजी ने कुबेर को लक्ष्मीजी का पूजन अर्चन करने की सलाह दी। इसलिए तब से लेकर

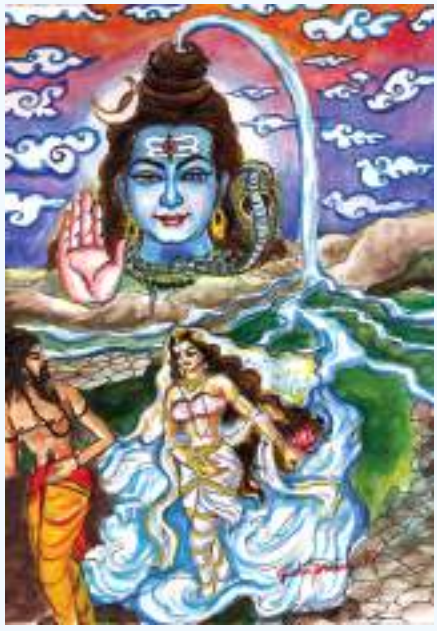

आज तक अक्षयतृतीया पर लक्ष्मीजी का पूजन किया जाता है।

५. अक्षयतृतीया के दिन महर्षि वेदव्यास ने महाभारत लिखना आरंभ किया था। इसी दिन महाभारत के युधिष्ठिर को 'अक्षयपात्र' की प्राप्ति हुई थी। इस अक्षय पात्र से युधिष्ठिर ने अपने राज्य के निर्धन एवं भूखे लोगों को भोजन देकर उसकी सहायता की थी।

६. इसी दिन दुशासन ने द्रौपदी का चीरहरण किया था। द्रौपदी को इस चीरहरण से बचाने के लिये श्रीकृष्ण ने कभी खत्म न होने वाली साडी का दान करके द्रौपदी की इज्जत बचाई थी।

७. अक्षयतृतीया के दिन श्रीकृष्ण के प्रिय सखा सुदामा श्रीकृष्ण को मिलने पहुँचे। सुदामा के पास श्रीकृष्ण को देने के लिए सिर्फ मुट्ठीभर चावल के दाने थे। वही सुदामा ने श्रीकृष्ण के चरणों में अर्पित कर दिये। अपने मित्र एवं सब के हृदय को जाननेवाले अंतर्यामी भगवान श्रीकृष्ण सब कुछ समझ गये और उन्होंने पलभर में मित्र सुदामा की निर्धनता को दूर करते हुए उसकी झोपडी को महल में परिवर्तित कर दिया और उसे सब सुविधाओं से संपन्न बना दिया।

८. भारत के उडीसा में अक्षयतृतीया का दिन किसानों के लिये शुभ माना जाता है। इस दिन यहाँ के किसान अपने खेत को जोतना शुरू करते है।

९. बंगाल में इस दिन गणेशजी तथा लक्ष्मीजी का पूजन कर सभी (व्यापारी द्वारा अपना लेखा-जोखा (आडिट बुक) की किताब शुरू करने की प्रथा है। बंगाल में इसे हलखता उत्सव कहते है।

१०. पंजाब में भी इस दिन का अधिक महत्व है। इस दिन को नये मौसम के आगाज का सूचक माना जाता है। इस दिन जाट परिवार का पुरुष सदस्य ब्रह्म मुहूर्त में अपने खेत की ओर जाते है, उस रास्ते में जितने अधिक जानवर एवं पक्षी मिलते है उतना ही फसल तथा बरसात के लिए शुभ सुगुन माना जाता है।

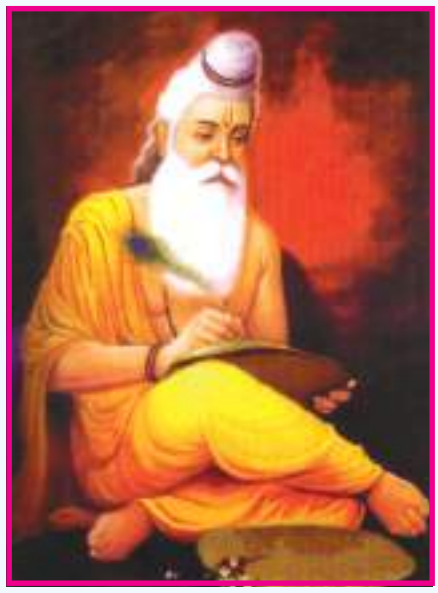

अक्षयतृतीया का पूजनविधि

इस दिन भगवान श्रीहरि विष्णु और महालक्ष्मीजी की पूजा का अधिक महत्व है। श्रीहरि विष्णुजी और श्री महालक्ष्मीजी का पंचोपचार, षोडशोपचार पूजन अभिषेक और अर्चना की जाती है। इस दिन श्रीहरि विष्णु का चावल से अर्चना करना बहुत लाभदायक बताया है। बाद में तुलसीपत्र के साथ भोजन प्रसाद अर्पित किया जाता है अंत में धूप बत्ती के साथ आरती की जाती है। गर्मी के मौसम में आनेवाले आम तथा इमली को भगवान को अर्पण करके पूरे साल की फसल तथा बक्षीस के लिए प्रार्थना की जाती है। कई जगह इस दिन मिट्टी के कुंभ में पानी भरकर इस में कच्चा आग - इमली डालकर भगवान को अर्पण करने की प्रथा है। घर परिवार में धन-धान्य समृद्धि, उन्नती के लिए श्रीविष्णुसहस्रनाम और श्री महालक्ष्मीजी को प्रसन्न करने हेतु श्रीसूक्त और श्री कनकधारा स्तोत्र का असंख्य मात्रा में पाठ किया जाता हैं।

अक्षयतृतीया के दिन दान - पुण्यविधि

इस पवित्र पर्व पर घी, शक्कर, अनाज, फल, सब्जी, इमली, आम, वस्त्र, सोना-चांदी आदि का दान देने की प्रथा है।

अक्षयतृतीया की खास बात

हमने देखा की यह दिन शुभ कार्य के लिये सर्वश्रेष्ठ है। अक्षयतृतीया के दिन विवाह होना अत्यंत शुभ माना जाता है। जिस प्रकार इस दिन पर दिया हुआ दान का पुण्य कभी खत्म नही होता उसी प्रकार इस दिन होनेवाले विवाह में पति-पत्नी के बीच प्रेम कभी खत्म नही होता। इस दिन विवाह करनेवाले जन्मोजन्म तक साथ निभाते है।

इस तरह अक्षयतृतीया मानव समाज के लिये सुख, समृद्धि, उन्नती, यश, कीर्ति, धन-धान्य, बुद्धि, विद्या की पूर्ति के लिये सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। हम मानव समाज को ऐसा सर्वश्रेष्ठ उत्तम मुहूर्त में पूरी तरह से भगवान की पूजा-अर्चना-दान-पुण्य करके जीवन को धन्य बना लेना ही इस पर्व की सार्थकता है।

जय श्रीमन्नारायण...

'मानव सेवा ही... माधव सेवा'

आर्ष धर्म में बताया गया है। सह प्राणियों को किसी भी तरह रक्षा की जाय, तो अनंत पुण्यफल हमें और हमारे परिवार को मिलेगा। कलियुग वैकुण्ठ के भगवान का आवास स्थान तिरुमल में रक्तदान करना परम पवित्र कार्य है। आपके रक्त से अन्य व्यक्ति का प्राण बचता है।

तिरुमल में रक्तदान कीजिए।

तिरुमल अश्विनी अस्पताल में प्रतिदिन सुबह 8 बजे से लेकर दोपहर 12 बजे के अंदर कोई भी रक्तदान कर सकता है। दूरभाष - 0877-2263601.

आइये... रक्तदान कीजिए!

संकटग्रस्त व्यक्ति को सहायता कीजिए!!

सिंहाचलम महान पुण्यक्षेत्र

- डॉ.एस.पी.वरलक्ष्मी

साल में एक ही बार बारह घंटे श्री वराहलक्ष्मीनृसिंहस्वामी का निजरूप दर्शन भक्तों को प्राप्त होता है। शेष समयों में वह मूर्ती चंदन से भरा रहता है। साल में एक बार प्राप्त इस दर्शन के लिए भक्त लोग हजारों आँखों से प्रतीक्षा करते हैं। वे ही सिंहाचलम में स्थित श्रीवराहलक्ष्मीनृसिंहस्वामी हैं।

सिंहाचलम दक्षिण भारतदेश के अत्यंत प्रधान वैष्णवक्षेत्रों में एक है। समुद्र तल से दो सौ चौवालीस २४४ मीटर ऊँचाई में सिंहगिरि पहाड पर विलसित श्री वराह - लक्ष्मीनृसिंहस्वामी के महत्व संबंधी कई कथायें प्रचलित हैं।

स्थल पुराण

सिंहाचलम में श्री महाविष्णु दस अवतारों में चौथा लक्ष्मीनृसिंह अवतार मूर्ती के रूप में विलसित है। ऐतिहासिक दृष्टि से राक्षस राजा हिरण्यकश्यप विष्णुमूर्ति के शत्रु है। हिरण्यकश्यप का पुत्र प्रह्लाद जन्म से ही विष्णु भगवान का भक्त है। नृसिंहस्वामी के रूप में स्तंभ से बाहर आकर विष्णुमूर्ति ने हिरण्यकश्यप का संहार किया। तदुपरांत प्रह्लाद ने वराह नृसिंहमूर्ति को सिंहगिरि पर प्रतिष्ठित करके आराधन किया। उसके बाद चंद्रवंशी राजा पुरूरव हवाई जहाज से जाते समय इस स्थल की विशेष प्रकाश से पुरूरव का हवाई जहाज नीचे तक आकर्षित हुई। यहाँ का स्थल विशेष शक्ति का फल है। वहाँ राजा को बिल में अच्छादित वराहनृसिंह स्वामी का दर्शन हुआ। आकाशवाणी का वचन है कि उस मूर्ती को एक वर्ष तक चंदन लेपन से रखकर वैशाख शुद्ध तृतीया के दिन ही बिना चंदन के निज रूप दर्शन करना है। इस महावाणी के अनुसार पुरूरव ने श्री वराह नृसिंहस्वामी का मंदिर निर्माण किया। वह संप्रदाय आज भी अमल में है। उग्रमूर्ति स्वामी को टंडा करने के लिए चंदन लेपन करते हैं। हर साल वैशाख शुद्ध तृतीया के दिन चंदन हटाकर भक्तों को निजरूप दर्शन करने का सौभाग्य प्रदान करते रहते हैं।

महान इतिहास

सिंहाचलम के मंदिर के प्रांत में रहे शासन मंदिर की प्रधानता को प्रस्फुटित करते हैं। श्रीकृष्णदेवरायलु गणपति प्रतापरुद्र को हराने के बाद सिंहाचलम पुण्यक्षेत्र को दो बार दर्शन करके स्वामी की सेवा केलिए कुछ गाँवों का इंतजाम

किया। भगवान को कीमतीपूर्ण कई आभरणों को समर्पण किया। रायलु से समर्पित आभरण कई तरह के हार आज भी मंदिर में हैं।

सिंहाचलम की महानता

सिंहाचलम मंदिर अन्य देवालयों की भांति पूर्वमुखी न होकर पश्चिमदिशामुखी रहता है। लोगों का विश्वास है कि पूर्व मुखद्वार ऐश्वर्य प्रदान करता तो पश्चिम मुखद्वार में विजय की प्राप्ति होती है। पहाड से ऊपर हवागोपुर से होते हुए मंदिर में प्रवेश करने के लिए ४१-इकतालीस सीढ़ियाँ हैं। यह बहुत प्राकृतिक शोभा पूर्ण दृश्य है।

मंडूक स्तंभ की विशेषता

देवालय के गर्भालय के सामने प्राकार में मंडूक स्तंभ है। इसे संतान गोपाल के यंत्र पर प्रतिष्ठा कर चुके। यह अत्यंत शक्तिवान है। लोगों का विश्वास है कि निस्संतान लोगों को इस मंडूक स्तंभ का आलिंगन करने से संतान की प्राप्ति होती है। स्वामीजी के भक्तगण इसी प्रदेश में 'कर' (टाक्स को तेलुगु में कप्पं; मंडूक - तेलुगु में कप्पा) चुकाते थे। इसीलिए कालगति के अनुसार यह कप्पं स्तंभम (मंडूक स्तंभ) कप्पस्तंभम होगया।

जलधारायें

सिंहाचलम पहाडों के बीच में स्थित मंदिर है। इन पर्वतों पर गंगधारा, आकाशधारा, चक्रधारा, माधवधारा नामक सहजसिद्ध जलधारायें हैं। लोग इन जलाशयों में नहाकर स्वामी का दर्शन करते हैं। स्वामीजी को सिर के बाल (वेणी) समर्पण करके भक्त गंगधारा में स्नान करके भगवान के दर्शन के लिए जाते हैं। प्रधान मंदिर के ईशान्य दिशा में झरना है। कल्याण के बाद स्वामीजी को इस झरने में स्नान कराते हैं। इस धारा पर योग नृसिंहस्वामी का मंदिर है। इस मूर्ती का भी विशेष महत्व है। सिंहगिरि पहाड के नीचे अडिविवरम गाँव में वराह पुष्करिणी है। साल में एक बार नाव में सजाकर नौका विहार करते हैं। इस पुष्करिणी के बीच में एक मंडप है।

उत्सव एवं त्योहार

सिंहाचलेश्वर के लिए साल भर त्योहार एवं उत्सव होते ही रहते हैं। दूल्हा (स्वामीजी को विशिष्ट वेष धारण से सजना - कल्याण महोत्सव-रथोत्सव-चंदनोत्सव-शयनोत्सवम-गिरिप्रदक्षिण-कराल चंदनं-पवित्रोत्सवं-शरन्नवरात्र-नावोत्सव-डोलोत्सव-नृसिंहजयंती आदि उत्सव मनाते हैं। इस क्षेत्र में साल भर विवाह होते ही रहते हैं। इस वास्ते सिंहाचल पहाड नित्य कल्याणों से चमक दमक से प्रफुल्लित होता रहता है। पहाड पर नृसिंह मंडप निम्न भाग में विराजित तिरुमल तिरुपति देवस्थान सरायों में विवाह होते रहते हैं।

इस प्रकार सिंहाचलेश का दर्शन कर सकते हैं। आंध्रप्रदेश में स्थित विशाखपट्टणम तक रेल, बस, हवाई जहाजों के मार्ग में जा सकते है। वहाँ से सिंहचलम पहाड के नीचे तक १५ कि.मी. का फासला है। वहाँ तक आटो, टाक्सी में पहुँच सकते हैं। सिंहाचलम पहाड के नीचे से सीढियाँ या सडक मार्ग में बस या टाक्सियों में भी भगवान के मंदिर में पहुँच सकते हैं।

सिंहाचलम महापुण्यक्षेत्र की संक्षिप्त परिचय है।

श्री गंगाजी की महिमा

- डॉ.विजय प्रकाश त्रिपाठी

भारतीय संस्कृति में गायत्री, गीता व गाय की जो महानता बताई गयी है, वह समन्वित देवनदी गंगा में भी विद्यमान है। महाभारत में इसे त्रिपथगामिनी, वाल्मीकि रामायण में त्रिपथगा तथा रघुवंश तथा कुमारसंभव में एवं शाकुन्तल नाट्य में त्रिस्तोता बताया गया है-

गंगा त्रिपथगा नाम दिव्या भागीरथीति च।
त्रीन् पथो भावयन्तीति तस्यात् त्रिपथगा स्मृता।।
(वाल्मीकि रामायण १/४४/६)

यही त्रिपथगा स्वर्गलोक, मृत्युलोक और पाताललोक को पवित्र करती हुई प्रवाहित होती है। विष्णुधर्मोत्तरपुराण में गंगाजी को त्रैलोक्यव्यापिनी बताया गया है।

'ब्रह्मन् विष्णुपदी गंगा त्रैलोक्यं व्याप्य तिष्ठति।' शिवस्वरोदय में इडा नाड़ी को गंगा कहा गया है। पुराणों में गंगा को 'लोकमाता' कहा गया है-

पापबुद्धिं परित्यज्य गंगायां लोकमातरि।
स्नानं कुरुत हे लोका यदि सद्गति मिच्छथ।।
(पद्मपुराण ७/९१५७)

तैत्तरीय आरण्यक तथा कात्यायन श्रौतसूत्र में गंगा का उल्लेख हुआ है। वेदोत्तरकाल में गंगा को अत्यधिक प्रतिष्ठा प्राप्त हुई है। पुराणों में गंगा के प्रति नितान्त पूज्यभाव वर्णित है। वाल्मीकीय रामायण के अनुसार गंगा जी की उत्पत्ति हिमालय पत्नी मैना से बताई गई है। गंगा उमाजी से श्रेष्ठ थीं। अपने पूर्वजों के उद्धार के लिए भगीरथ जी अत्यन्त कठोर तपस्या की थी। तब ब्रह्मा जी भगीरथ की तपस्या से प्रसन्न हो गए। गंगा को धारण करने के लिए भगीरथ ने अपनी तपस्या से शिवजी को सन्तुष्ट किया। एक वर्ष तक गंगा उनकी ही जटाओं में भटकती रहीं। अन्त में प्रसन्न होकर भगवान शंकर ने अपनी एक जटा से गंगा-धारा को छोड़ दिया। गंगाजी भागीरथ के पीछे-पीछे कपिल मुनि के आश्रम में गयीं तथा उन्होंने सगरपुत्रों का उद्धार कर दिया। देवी भागवतपुराणानुसार भगवान विष्णु के तीन पत्नियाँ थी। कलह के कारण परस्पर के शापवश गंगा और सरस्वती को नदी रूप में पृथ्वी पर आना पड़ा। गंगा अवतरित होकर पतितपावनी बनीं-

गंगे यास्यसि पश्चाच्चमंशेन विश्वपावनी।।
भारतं भारती शापात् पापदाहाय पापिनाम्।।
भगीरथस्य तपसा तेन नीता सुकल्पिते।।
(देवीभागवत ९/६/४९-५०)

सत्यवादी राजा हरिश्चन्द्र के कुल में आठवीं पीढ़ी में सगर का जन्म हुआ था। काशी के गंगा तट पर (वर्तमान में हरिश्चन्द्र घाट)

''तीनों लोकों के महान् कल्याण के लिए राजा भगीरथ गंगा को पृथ्वी पर लाए, जहाँ सबको मुक्ति प्रदान करने वाली मणिकर्णिका पूर्व से ही विराजमान थी। अब गंगा के आ जाने से उसका प्रभाव और अधिक बढ़ गया।''

राजा हरिश्चन्द्र ने चाण्डाल का दास्यकर्म किया था। कुछ विद्वानों का मत है कि पूर्व से ही विद्यमान गंगा को भगीरथ क्यों पृथ्वी पर लाए? अतः स्कन्दपुराण के श्लोकों से उपर्युक्त शंका का पूरा समाधान हो जाता है-

त्रयाणामपि लोकानां हिताय महते नृपः।
समानैषीत्ततो गंगा यत्रासीन्मणिकर्णिका।।
प्रागेव मुक्तिः संसिद्धा गंगासंगात् ततोऽधिका।
यदा प्रभृति सा गंगा मणिकर्ण्या समागता।।

(स्कन्द. काशीखण्ड ३०/३-९)

''तीनों लोकों के महान् कल्याण के लिए राजा भगीरथ गंगा को पृथ्वी पर लाए, जहाँ सबको मुक्ति प्रदान करने वाली मणिकर्णिका पूर्व से ही विराजमान थी। अब गंगा के आ जाने से उसका प्रभाव और अधिक बढ़ गया।'' इस तरह स्कन्दपुराण से स्पष्ट है कि काशी में गंगा आगमन से पूर्व मणिकर्णिका अवस्थित थी।

श्रीमद्भागवत के पंचम स्कन्ध मतानुसार राजा बलि ने तीन पग पृथ्वी नापने के समय वामन भगवान का वाम पद ब्रह्माण्ड के ऊपर चला गया। वहाँ पर ब्रह्मा जी के द्वारा भगवान के चरण धोने के उपरान्त उनके कमण्डलु में जो जलधारा स्थित थी, वह उनके चरणस्पर्श से पवित्र होकर ध्रुवलोक में गिरी और चार भागों में विभक्त हो गयी - १. सीता, २. अलकनन्दा ३. चक्षु ४. भद्रा। सीता ब्रह्मलोक से चलकर गन्धमादन के शिखरों पर गिरती हुई पूर्व दिशा में चली गयी। अलकनन्दा दूरस्थ पर्वत-शिखरों को लाँघती हुई हेमकूट से गिरती हुई दक्षिण में भारतवर्ष चली आयी। चक्षु नदी माल्यवान् शिखर से गिरते हुए केतुमालवर्ष के मध्य से होकर पश्चिम में चली गयी। भद्रा नदी गिरि-शिखरों से गिरते हुए उत्तर कुरुवर्ष के मध्य से होते हुए उत्तर दिशा में चली गयी।

विन्ध्य पर्वत के उत्तर भाग में इसे भागीरथी गंगा कहा जाता है और दक्षिण भाग में गौतमी गंगा (गोदावरी) कहा जाता है। भारतीय वाङ्मय साहित्य में गंगा उत्पत्ति की दो तिथियाँ उपलब्ध होती हैं। आदित्यपुराण के अनुसार प्रथम वैशाख शुक्ल पक्ष की तृतीया और द्वितीय ज्येष्ठ शुक्ल पक्ष की हस्तानक्षत्र सहित बुधवार से युक्त दशमी तिथि, यह स्कन्दपुराण के अनुसार है। द्वितीय तिथि गंगा-शहरा की है, जो राजा भगीरथ से सम्बद्ध प्रतीत होती है।

गंगाजल शारीरिक, मानसिक क्लेशों का पूर्णतः विनाशक है। अस्तु, पुराण शास्त्रों में इसका सम्यक विवेचन हुआ है। वास्तव में गंगा विश्वपावनी व लोकमाता है। गंगा के आश्रय से मनुष्य भौतिक उन्नति नहीं आपितु मानवता को उपकृत करने हेतु आध्यात्मिक उन्नति भी कर सकता है। सद्गति के इच्छुक नर-नारी के लिए गंगा ही एक ऐसा तीर्थ है, जिनके दर्शन मात्र से संपूर्ण पाप नष्ट हो जाते हैं। गंगाजी के नाम स्मरण मात्र से पातक, कीर्तन से अतिपातक और दर्शन मात्र से महापातक भी नष्ट हो जाते हैं। जैसे अग्नि का संसर्ग होने से रुई का ढेर क्षण भर में भस्म हो जाता है, वैसे ही गंगाजल के स्पर्श होने पर मनुष्य के संपूर्ण पाप एक क्षण में ही दग्ध हो जाते हैं। जो सैकड़ों योजन से दूरस्थ रहकर भी 'गंगा-गंगा' पुकारता है, वह सभी पापों से मुक्त होकर श्री विष्णुलोक को प्राप्त होता है, इस सन्दर्भ में शुकदेव जी कहते हैं-

न ह्येतत् परमाश्चर्य स्वर्धुन्या यदिहोदितम्।
अनन्तचरणाम्भोज प्रसूताया भवच्छिदः।।
संनिवेश्य मनो यस्मिञ्छन्द्धया मुनयोऽमलाः।
त्रैगुण्यं दुस्त्यजं हित्वा सद्यो यातास्तदात्मताम्।।

(श्रीमद्भागवत ९/९/१४-१५)

गंगाजी की महिमा के विषय में जो कुछ भी कहा गया है, उसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं, क्योंकि गंगाजी प्रभु के उन चरणकमलों से निकली हैं, जिनका श्रद्धा के साथ चिन्तन करके बड़े-बड़े मुनि-सन्त निर्मल हो जाते हैं और तीनों गुणों के कठिन बन्धन को काटकर तुरन्त भगवत्स्वरूप बन जाते हैं। फिर गंगाजी विश्व के बन्ध-फन्द काट दें, इसमें कौन बड़ी बात है।

भगवान परशुराम से विनय

हे परशुधर! विप्रकुल-भूषण, परन्तप आप है।
धर्म की अब ग्लानि होती, बढ़ रहे त्रय ताप हैं।।
वर्ण चारों भ्रष्ट हैं, नर धर्म-कर्म विमूढ़ हैं।
तामसी, पापी, पिशुन, शासक बने अति मूढ़ हैं।।
वर्ण संकर हो रहा, भारत समाज निराश है
ब्रह्म-भीतर संकटों से ग्रस्त-माया पाश है।
मोह, ममता, मान, मद, ईर्ष्या पिपासा बढ़ रही
काम, क्रोध विलासिता की, चरम सीमा चढ़ रही।
सकल मानस, रोग-घेरे, तमोगुण दुःराज्य है,
मातृ-भू खण्डित हुई, दौर्बल्य का साम्राज्य है।
आसुरी शासक सहस्राबाहु बन ललकारते
धेनु, सुर, सज्जन, द्विजों को प्रबल-खल संहारते।।
अस्तु भगवान्। परशुधारी राम! यह सुन लीजिए
मानसर, कैलास कम्पित, मुक्त हिमनग कीजिए।
त्रस्त नन्दन-वन, त्रिविष्टप, अमर-पुर म्रियमाण है
धर्म संस्कृति, आत्मा बिन, राष्ट्र यह निष्प्राण है।।
नाथ चिरंजीवी, तपस्वी, ब्रह्मचारी आप हैं
कन्ध पर धारण किए द्वय-तूर्ण अक्षय चाप हैं।
आप ही आराध्य-निर्गुण, आप ही साकार हैं
कार्य कारण साध्य स्वामी, शान्ति के आगार हैं।
सौख्य की सौरभ छटा हे नाथ! अब छिटकाइए
दुष्ट-दुर्मति, दुरित-दानव, दर्प दूर भगाइए।
घिर रही काली-घटाएँ, भारती के भाल पर,
ग्रहण लगता जा रहा है, राष्ट्र रवि के ज्वाल पर,
आततायी शासकों के लिए आप कराल हैं
भक्त के भगवान हैं, आक्रामकों के काल हैं।
विकट-संकट-ग्रस्त-भारत, शत्रु-दल संहार दें
भव्य भावों में विभव भर भावना-भण्डार दें।।

श्री परशुराम जयंती
(७-५-२०१९) के संदर्भ में...

- श्रीमती रमन त्रिपाठी

श्रीरामानुज जयंती (९.५.१९) के संदर्भ में...

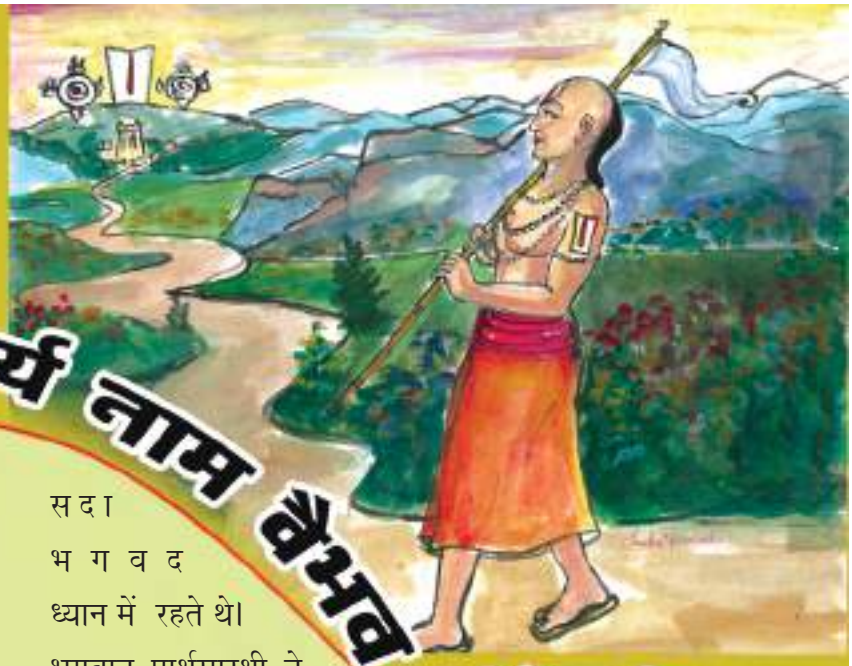

श्री रामानुजाचार्य नाम वैभव

- श्री केशव दांडे

एक समय श्रीवैकुण्ठधाम में श्री विष्वक्सेनजी ने भूतल पर अवतार लेने की इच्छा भगवान श्रीमन्नारायण को बताई और कहा कि, ''सभी जीवों को सदुपदेश देकर सन्मार्ग दिखाकर वैकुण्ठधाम भेजने की इच्छा हैं।'' फिर भगवद् इच्छा से श्री विष्वक्सेनजी ने दक्षिण भारत के कुरुका नगरी में अवतार लेकर श्री शठकोपाचार्य नाम से प्रसिद्ध हुए। परन्तु अवतार लेते ही संसारी को देखकर अपने नेत्र बंद कर दिये। और इमली के वृक्ष के नीचे भगवद् ध्यान में अपने जीवन के १६ वर्ष व्यतीत किये। परन्तु उन्होंने सोचा कि भगवान के वियोग में उनके सन्मुख ली गयी प्रतिज्ञा अधुरी रह जायेगी इसके लिये जीवों के उद्धार हेतु आदिशेष श्रीरामानुजाचार्य का अवतार होना चाहिये जो जीवों को समस्त पापों से छुडाकर उनको भगवान से मिलाकर उन्हें वैकुण्ठधाम प्रदान करेंगे। और भविष्यवाणी कि, ''आज से चार हजार वर्ष के बाद महाभागवत श्रीरामानुजाचार्य अवतार लेंगे।''

इसी तरह श्री नाथमुनि स्वामीजी ने भी भविष्यवाणी की, ''भगवान श्रीमन्नारायण रूपी समुद्र बहकर वेदरूपी जल-श्रीरामानुज यतिराज रूपी विशाल सरोवर में प्रवीण होंगे। और अनेक नदियों द्वारा प्रवाहित होकर उपदेश रूप बनकर जीवों को सींचकर हरा भरा कर देंगे।'' इस भविष्यवाणियों के चलते भगवद आज्ञा से उभय विभूतियों का अधिकार लेकर संसारी जीवों को उपदेश देकर वैकुण्ठ पहुँचाने के लिये श्री आदिशेषजी ने कालान्तर में श्रीरामानुजस्वामीजी के रूप में अवतार लिया।

पश्चिम तोंडीर प्रदेश में भूतपुरी नामक एक नगरी है। वहाँ महाभागवत श्री केशवाचार्यजी नामक वैष्णवोत्तम ब्राह्मण सदा भगवद ध्यान में रहते थे। भगवान पार्थसारथी ने उन्हें स्वप्न में दर्शन देकर कहा, ''मैं ही अपने अंश से आपके पुत्र रूप में अवतार लूँगा।'' कुछ काल व्यतीत होने पर श्री केशवाचार्य की पत्नी कान्तिमती देवी को मेष राशि के सूर्य होने पर चैत्र शुक्ल पंचमी गुरुवार को शिशु रामानुज का अवतार हुआ। कर्क लग्न के अभिजित मुहूर्त में अमित तेजस्वी फणिराज श्री शेषजी का रामानुजाचार्य के रूप में अवतार हुआ जिससे भूतपुरी महापुण्यमयी हो गयी।

श्री शैलपूर्ण स्वामीजी ने उस शिशु को जन्म के बारहवें दिन चक्रांकित कर ''रामानुज'' नाम दिया। १६ वर्ष कि आयु में विवाह संस्कार हुआ। तदनंतर वह श्री यादवप्रकाशजी से सभी शास्त्रों कि शिक्षा सम्पादन करने श्री कांची पहुँचे। वहाँ एक राजकन्या को अपना चरणोदक देकर ब्रह्मराक्षस से मुक्त कराया। श्री यादवप्रकाशजी को कुछ उक्तियों का गलत अर्थ समझाते देख दुःखी हुए। ईर्ष्या द्वारा मारने कि कोशिश से श्रीरामानुजस्वामीजी को श्री वरदराज भगवान ने बचाया तभी से श्री कांचीपूर्ण स्वामीजी की आज्ञा से वहीं श्री वरदराज भगवान कि जल सेवा का कैंकर्य करने लगे।

अपनी पत्नी द्वारा भागवत-आचार्य अपचार सहन न होने के कारण उन्हें पितृगृह भेज कर स्वामीजी ने सन्यासाश्रम ग्रहण किया। उन्हें तिलक, कमण्डलु और काषायवस्त्र में देख श्री कांचीपूर्ण स्वामीजी उन्हे ''यतिराज'' संज्ञा से

संबोधित किया। श्री वरदराज भगवान कि आज्ञा से स्वामीजी श्रीरंगं श्रीरंगनाथ भगवान की सन्निधि में पहुँचे। श्रीरंगनाथ भगवान ने उन्हें कहा ''यति-सार्वभौम'', आप दोनों (लीला एवं नित्य विभूति) विभूतियों की रक्षा करते हुए यही रहे क्योंकि मैं अब विश्राम करना चाहता हूँ।'' और उन्हें विभूतियों का अधिकार देकर उनका ''उभय विभूतिनायक'' नाक रखा।

श्रीरामानुजाचार्यजी को १८ बार जाने पर श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी ने मंत्रार्थ दिया और कहा कि गोपनीय हैं इसे परीक्षा लिये बिना किसी को भी नहीं देना हैं। फिर भी गुरुद्रोह के कारण खुद को नरक प्राप्ति चलेगी परन्तु हजारों श्रीवैष्णवों को उद्धार के कारण श्रीरामानुजाचार्यस्वामीजी ने उस मंत्र को मंदिर के गोपुर पर चढ़कर सभी को उपदेश दिया। तब श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी ने उन्हें ''मन्नाथ'' कहकर पुकारा और वह ''कृपामात्र प्रसन्नाचार्य'' कहाये गये।

तदनंतर श्रीरामानुजाचार्यस्वामीजी ने श्रीवैष्णव धर्म का प्रचार प्रसार करने लगे। यज्ञमूर्ति नामक एक घमंडी मायावादी को शास्त्रार्थ में हराकर उन्हें पंचसंस्कार किया। तदनंतर श्रीरामानुजाचार्यस्वामीजी ने श्री भाष्य का निर्माण किया। कुरंगनगरी में नम्बि नारायण के दर्शन करने गये। तभी नम्बि नारायण ने पूछा कि, ''जब जब में अवतार लेता हूँ लोग मुझे प्राकृत नर समझते है आप कैसे उन्हें वैष्णव बनाते हैं।'' यह सुनकर श्रीरामानुजाचार्यस्वामीजी ने भगवान नम्बि नारायण को मंत्रार्थ का उपदेश दिया और दास नाम श्रीवैष्णव नम्बी रखा। कुरंगनगरी से आगे केरल फिर शारदापीठ पहुँचे। वहाँ भगवती सरस्वती ने उनसे कप्यास का अर्थ समझकर हर्षित होकर उन्हें ''भाष्यकार'' पदवी से विभूषित किया। फिर वहाँ के राज पण्डितों को परास्त कर वैष्णव बनाया। तदनन्तर श्रीरामानुजाचार्यस्वामीजी तीर्थयात्रा भ्रमण और वैष्णवता का प्रचार करते हुए वेंकटाचल पहुँचे। वहाँ पर कलह चल रहा था वह मिटाने के लिए श्रीरामानुजाचार्यस्वामीजी ने भगवान श्रीविष्णु के आयुध शंख, चक्र इत्यादि और देवता के आयुध त्रिशूल, डमरु इत्यादि भगवान के सन्मुख रख पट बंद कर दिये। और कहा इसमें से जो भगवान ग्रहण करेंगे उस रूप में उन्हे पूजा जाएगा। पट खोलने के बाद सभी ने देखा गया की भगवान श्री वेंकटेशजी के स्वरूप में शंख चक्रादी धारण कर दर्शन दिये, कलह मिट गया। श्री वेंकटेशजी को प्रणाम कर अपनी पुत्री स्वरूपा उक्त स्वर्ण लक्ष्मी को उन्हे प्रदान किया और भगवान ''श्री वेंकटेशजी के श्वशुर'' कहलाये।

तदनंतर श्री धनुर्धरदास पर कृपा कर उन्हें श्रीरंगनाथ भगवान के नेत्रों के दर्शन कराये और वह सुंदर श्री नेत्रों के दर्शन कर भगवद्भक्त बन गये। एक बार एक मूक व्यक्ति को मार्ग से जाते देख उसे मठ में ले जाकर श्रीरामानुजाचार्य ने अपने चरणकमल का स्पर्श कराकर आचार्य निष्ठा का उपदेश दे उसका उद्धार किया।

तदनंतर श्रीरामानुजाचार्यस्वामीजी ने पश्चिम दिशा में प्रस्थान किया, वहाँ अपनी शिष्य चैलाचलाम्बा पर कृपा कि और फिर दक्षिण दिशा में पहुँचे। वहाँ के निवासी मायावाद में अखण्ड डुबे हुवे थे उनके उद्धार के लिये उन्होंने श्री दाशरथी स्वामीजी से आज्ञा कि तुम गाँव के मुख्य तालाब में अपने पाद प्रक्षालन करके आवो। इस प्रकार करने पर उसके फल स्वरूप पर श्रीवैष्णव के चरणोदक पान करने से वहाँ के

निवासी भयंकर ममकार से मुक्त होकर श्रीरामानुजस्वामीजी की शरणागति स्वीकार कि। इनके नित्य दर्शनों के लिये अपने चरण चिह्न को स्थापित कर आचार्य चरणों का महत्व समझाया।

तदनंतर भक्तपूर्ण नामक ग्राम में एक राजकन्या को अपना चरणोदक देकर ब्रह्मराक्षस से मुक्त कराया। एक समस्त राजपरिवार और ग्राम निवासियों ने श्रीरामानुजस्वामीजी कि शरणागति स्वीकार की।

श्री यतिराज श्रीरामानुजाचार्य समस्त संसार का उज्जीवन करते हुए भक्तग्राम में कुछ दिन निवास किया तब ज्ञात हुआ कि तिलक करने के लिए श्रीरंगम् से लाया हुआ पासा समाप्त होने को हैं। तभी भगवान श्रीयादवाद्री नाथ ने दर्शन देकर कहा कि यादवाद्रि पर प्रर्याप्त मात्र में पासा निर्माण के लिये शुद्ध श्वेत मृतिका उपलब्ध हैं। इसलिये भगवान कि स्थापना और मृतिका कि खोज में यादवाद्रि पहुँचे। तभी पुनर्वसु नक्षत्र में भगवान का प्रादुर्भाव हुआ और त्रिदण्ड कि जड़ का स्पर्श कर श्वेत मृतिका निकाली। उस मृतिका से श्रीरामानुजाचार्य ने स्वयं ऊर्ध्वपुण्ड्र धारण किया। वहाँ भगवान के नित्य उत्सव होने लगे। फिर उत्सव मूर्ति के प्राप्ति के लिये ध्यान करने पर पता चला कि उत्सव मूर्ति दिल्ली नरेश के पास 'राम प्रिय' नाम से प्रसिद्ध हैं। वहाँ जाकर पता चला कि वह वहाँ कि राजकन्या के पास परम आराध्य देव के रूप में पूजित हैं। राजकन्या के निवास पर

पहुँचने पर देखा कि पिताम्बरधारी, कस्तूरी तिलक विभूषित, दिव्य आभूषणों से अलंकृत, सुंदर मुखारविन्द वाले भगवान हर्षित मुद्रा में चले आ रहे हैं। भगवान राजकन्या के शयनगृह का त्याग करके श्री यतिराज कि गोद में आकर विराजमान हो गए। श्री यतिराज ने कहा कि यह मेरे सम्पत पुत्र हैं। और भगवान सम्पतकुमार नाम से प्रसिद्ध हुए। यादवाद्रि पर सम्पतकुमार भगवान कि स्थापना करने जाते वक्त राजकन्या उनमें विलीन हो गयी। उस राजकन्या कि मूर्ति को भगवान कि चरणों में स्थापित किया।

प्राचीन समय में श्री गोदाम्बाजी ने भगवान श्रीमन्नारायण से प्रार्थना कि थी की अपने मंगलमय पाणीग्रहण संस्कार के बाद मैं आपको १०८ कलश क्षीरान समर्पण करूंगी। इसी संकल्पित कार्य को श्रीरामानुजाचार्यस्वामीजी ने पूर्ण किया। अत्यंत हर्षित होकर श्री गोदाम्बाजी ने श्री यतिराज से कहा कि आपने एक बहिन के संकल्प को बड़े भाई कि तरह पूरा किया और ''गोदाग्रज'' नाम प्रदान किया।

तदनंतर श्री यतिराज कुरुकापुरी में आये, वहाँ परम प्रसन्न होकर श्री शठकोपसूरी ने यतिराज को अपनी पादुका का पद प्रदान करके सम्मानित किया। जिससे श्री यतिराज का नाम ''श्रीशठजित्पाद'' लोक में प्रसिद्ध हुआ।

श्रीरामानुजस्वामीजी ने संपूर्ण भारत भ्रमण कर सभी को श्रीवैष्णव बनाया और भगवान श्रीमन्नारायण का वैभव बढ़ाया। श्रीरामानुजस्वामीजी की इन्हीं पदचिह्नों पर सभी श्रीवैष्णव भागवतों को चलना चाहिये और श्रीरामानुज संप्रदाय का प्रचार प्रसार करना चाहिये। अपने आचार्य श्रीरामानुजस्वामीजी के कहे अनुसार वैष्णवता का प्रचार प्रसार, आचार्य-आल्वारों के ग्रन्थों का अवलोकन तदनुसार आचरण करके ताजिन्दगी भगवत-भागवत-आचार्य कैंकर्य में व्यतीत करना चाहिये। श्रीमन्नारायण भगवान के चरणों कि शरणागति प्राप्त कर दृढ़ विश्वास से श्रीरामानुजस्वामीजी का दास बन कर रहें।

मंगलगिरि श्री लक्ष्मी नरसिंह स्वामी

- डॉ.जी.मोहन नायुडु

श्रीमत्पयोनिधि विकेतन चक्रपाणे।
भोगीन्द्र भोगमणि राजित पुण्यमूर्ते।।
योगीशशाश्वत शरण्य भवाब्धिपोत।
लक्ष्मीनृसिंह ममदेहिकरावलम्बम।।

विष्णु के विभिन्न अवतारों में चतुर्थ अवतार नृसिंहावतार है। नृसिंह स्वामी का सुप्रसिद्ध पुण्यक्षेत्र है मंगलगिरि। भारत के प्रसिद्ध नृसिंह क्षेत्रों में मंगलगिरि का एक विशिष्ट स्थान है। इस क्षेत्र में तीन रूपों में विद्यमान नृसिंह स्वामी को हम देख सकते हैं। पहला पहाड के ऊपर स्थित नरसिंह स्वामी का नाम पानकाल (गुड का पानी) नरसिंह स्वामी, दूसरा पहाड के नीचे स्थित लक्ष्मी नरसिंह स्वामी और तीसरा पर्वत के शिखराग्र पर स्थित गंडाल (विपत्ति) नरसिंह स्वामी। यह वैष्णव क्षेत्र कृष्णा नदी के बहुत समीप है। लक्ष्मी देवी ने इस पर्वत पर तप किया इसलिए इसका नाम मंगलगिरि पडा। यह पुण्यक्षेत्र (विजयवाडा से १२ कि.मी.) विजयवाडा और गुंटूर के मध्य है अर्थात् आन्ध्रप्रदेश की राजधानी अमरावती के निकट ही है।

समुचि नामक राक्षस संहार के बाद उग्र रूप से युक्त विष्णु को देखकर सभी देवताओं ने उनसे शांत रूप धारण करने की विनती की। फिर विष्णु ने अमृत माँगा, उनके आदेशानुसार सभी देवताओं ने मिलकर उन्हें जब अमृत समर्पित किया तब वे शांत हुए। कृतयुग में अमृत, त्रेतायुग में गाय के घी, द्वापर युग में गाय के दूध को नैवेद्य (प्रसाद) के रूप में स्वीकृत स्वामीजी कलियुग में गुड और पानी से युक्त रस को स्वीकार कर रहा है। यहाँ स्वामी के दर्शनार्थ आनेवाले भक्त भगवान को नैवेद्य (प्रसाद) के रूप में जो पदार्थ (गुड का पानी) समर्पित करते हैं, उसमें से आधा ही भगवान स्वीकार करता है और बचा हुआ आधा भक्तों को दे देता है। पानकाल नरसिंह स्वामी के मंदिर में स्वामी - दर्शनार्थ भक्तों को सुबह से दोपहर तक ही अनुमती दी जाती है। प्रचलन में है कि रात में देवता आकर यहाँ स्वामीजी की सेवा करते हैं। अन्तरालय या गर्भालय में नरसिंह स्वामी के साथ भक्त प्रह्लाद और लीलावती देवी की मूर्तियाँ भी हैं। इस मंदिर की एक विशेषता है कि यहाँ का ध्वजस्तंभ आग्नेय दिशा में है। मंदिर के पीछे लक्ष्मी देवी का मंदिर है। मंगल कार्य करनेवाली लक्ष्मी देवी ने यहाँ तप किया इसलिए इस प्रांत का नाम मंगलगिरि पडा। मंदिर के पश्चिम में एक गुफा है। इसी गुफा के मार्ग से प्राचीन काल में मुनि गण कृष्णा नदी में जलपान करके वापस लौटते थे। मंगलगिरि के लिए अन्य नाम भी प्रचलन में हैं - तोताद्रि, स्तुताद्रि और मंगलाद्रि। स्वामी जिस पर्वत पर है, उस पर्वत को मुक्ति पर्वत भी कहते हैं।

मंगलगिरि (पहाड) के नीचे श्री लक्ष्मी नरसिंह स्वामीजी का क्षेत्र है। यहाँ की प्रतिमा देवताओं द्वारा प्रतिष्ठापित है

श्री नृसिंहस्वामी जयंती (१७.५.२०१९) के संदर्भ में...

अर्थात् द्वापर युग में पांडव वनवास के समय इस मंदिर में युधिष्ठिर ने मूल विराट या देव प्रतिमा को प्रतिष्ठापित किया। द्रविड शैली के अनुसार इस मंदिर का निर्माण हुआ। इस मंदिर में ११ मंजिलों से युक्त मीनार बहुत ही आकर्षित है। यहाँ का शांत वातावरण भक्तों को सहज ही आकर्षित करता है। ऐतिहासिक आधारों पर स्पष्ट होता है कि विजय नगर शासनकाल में इस मंदिर का बहुत विकास हुआ। उस समय के शिल्पियों द्वारा यहाँ बहुत कलात्मक ढंग से २४ स्तंभों का निर्माण किया गया। हर साल मार्च और अप्रैल (फाल्गुन माह) में अत्यंत वैभव के साथ ब्रह्मोत्सव मनाया जाता है। इसमें भाग लेने के लिए देश के कोने कोने से भक्त आते हैं। ब्रह्मोत्सव के संदर्भ में भगवान को विविध वाहनों पर बिठाकर ग्रामोत्सव मनाते हैं।

दक्षिणावृत शंख

मंगलगिरि श्री लक्ष्मी नरसिंह स्वामीजी के मंदिर में एक दक्षिणावृत शंख भी है। २०-११-१८२० को तंजावूर के महाराज ने यह शंख भेंट के रूप में दिया। इस शंख से हमेशा ओंकार की ध्वनि सुनाई पडती है। मुक्कोटि एकादशी के दिन इसी शंख की सहायता से भक्तों को तीर्थ जल दिया जाता है।

कल्याणोत्सव

आगम विधि के अनुसार श्री लक्ष्मी नरसिंह स्वामी, श्रीदेवी, भूदेवी का कल्याणोत्सव मनाया जाता है। क्षेत्र परंपरा के अनुसार फाल्गुन शुद्ध पूर्णिमा के पहले दिन अर्थात् चतुर्दशी की रात में नरसिंह स्वामीजी का कल्याण होता है।

रथोत्सव-सांस्कृतिक महोत्सव

श्री लक्ष्मी नरसिंह स्वामी के कल्याणोत्सव के बाद पूर्णिमा के दिन रथोत्सव होता है। उसी दिन देश के कोने-कोने में लोग होली मनाते हैं। इस मंदिर में ११ मंजिलों से युक्त मीनार के बाद सबसे महत्वपूर्ण स्थान रथ को दिया जाता है। यहाँ का रथ छह चक्रों से बहुत सुंदर ढंग से निर्मित है। बहुत बडी भारी रस्सी की सहायता से इस रथ को भक्तजन खींचते हुए भक्ति भाव से प्रफुल्लित होते हैं। उसी रथ पर आसीन अर्चक नरसिंह स्वामी की स्तुति करते हुए भक्तों के उत्साह बढाते हैं। बहुत सारे युवक या भक्त उस रस्सी को पकडकर

रथ खींचने के लिए प्रतिस्पर्धा की भावना से आगे बढते हैं। नरसिंहस्वामी के भक्त उस रथ के रस्सी को पकडकर अपने आपको धन्य समझते हैं। उस दिन हजारों लोगों के बीच होनेवाली रथ-यात्रा में जातिगत भेदभावों को छोडकर सभी जाति और धर्मों के लोग सक्रिय भाग लेते हैं। परंपरागत यह संस्कृति आज भी प्रचलन में है। इस प्रकार यह रथोत्सव एक प्रकार से सांस्कृतिक महोत्सव है।

पर्वत शिखराग्र पर स्थित गंडाल नरसिंह स्वामी (विपत्ति दूर करनेवाले स्वामी) का कोई रूप नहीं है। यहाँ मूर्ति या कोई रूप नहीं है। केवल दीप जलाने की व्यवस्था है। भक्त अपनी विपत्ति से बचने के लिए यहाँ गंड दीप (विपत्ति से भक्तों की रक्षा करनेवाला दीप) जलाने की संकल्पना करते हैं। जब भक्तों की समस्त बाधाएँ या विपत्तियाँ दूर होती हैं तब वे यहाँ आकर गंड दीप जलाते हैं। संध्या समय में भक्तों द्वारा प्रज्वलित दीपों का प्रकाश आस पास के गाँवों तक व्याप्त होता है।

दैव योगिनी वेंगमाम्बा

-श्री के.रामनाथन

श्री वेंगमांबा जयंती (१७.५.२०१९) के संदर्भ में...

भविष्य में हमारे देश में नारी के द्वारा ही लोग उत्तम चिंतन प्राप्त करेंगे। नारी की उन्नति के कारण देश भर में सभ्यता, शिक्षा, प्रतिभा, भक्ति आदि का विकास होगा।

- स्वामी विवेकानंद

''त्याग, मनोबल, इंद्रिय दमन, गुरु तथा धर्म ग्रंथों पर विश्वास, दूसरे की पत्नी को माँ समझना, अन्य की संपत्ति पर इच्छा न रखना आदि उत्तम गुणों के साथ जो भगवान के चरण में आते हैं, वे सच्चा ज्ञान पाते हैं। उनको इसी मानव जन्म में मुक्ति का आनंद प्राप्त होता है।'' यह कथन १७वीं शताब्द में जीवित दैव योगिनी वेंगमाम्बा का है। वे अपनी कृति 'अष्टांग योग सारम' में इसे बताती हैं। उनका दृढ विश्वास यह था कि, मुक्ति के द्वारा मानव आनंदमय जीवन भोग सकता है।

वेंगमाम्बा का जन्म आंध्रप्रदेश के चित्तूर के निकट तरिगोंडा नामक गाँव में हुआ। उनके पिता वैष्णव ब्राह्मण कृष्णय्यर और माता मंगमाम्बा हैं। उनका जीवन काल ई.१७३० से ई.१८१७ तक का है। वेंगमाम्बा बचपन से ही तिरुमल भगवान श्री वेंकटेश्वर पर बडी श्रद्धा एवं गहरी भक्ति रखती थी। उनका मन सदा सर्वदा भगवान के चिंतन और ध्यान रहता था।

बालिका विवाह

उनके जमाने में बाल्य विवाह की प्रथा समाज की रीति बनी हुई थी। इसलिए उनके पिता ने वेंगमाम्बा का विवाह उनकी कम उम्र में ही वेंकटाचलपति नामक व्यक्ति से कराया। उस छोटी उम्र में वेंगमाम्बा ने अपने विवाह की व्यवस्था को इनकार करने और भगवान के प्रति अपनी अडिग भक्ति को खुले दिल से बताने की हिम्मत नहीं थी। इसलिए उन्हें अपना विवाह स्वीकार करना पडा। परन्तु उन्हें अपने पारिवारिक जीवन से भी अत्यधिक सुख भगवान वेंकटेश्वर पर रखी भक्ति में मिलता था। दुर्भाग्यवश विवाह के कुछ ही दिनों में उनके पति का देहांत यकायक हो गया, जिससे अब वेंगमाम्बा विधवा बन गयी।

नारी की आजादी

वेंगमाम्बा अपनी कम उम्र में ही अनेक आध्यात्मिक ग्रंथों का ज्ञान प्राप्त कर चुकी थी। उनके पिता में अपनी मासूम बेटी को विधवा के रूप और वेष में देखने का मन नहीं था। लेकिन गाँव के लोग परंपरागत रीति के अनुसार वेंगमाम्बा को विधवा के वेष में रहने के लिए मजबूर करने लगे। इससे उनके पिता बडी चिंता में डूब गए। यह देखकर वेंगमाम्बा ने अपने पिताजी से कहा, ''प्रिय पिताजी, विधवा का रूप धारण करने के बारे में किसी शास्त्र में कोई नियम बताया गया है तो, उसके अनुसार करने मैं तैयार हूँ। लेकिन किसी भी शास्त्र में विधवा के लिए ऐसा कोई नियम नहीं बताया गया है। सिर्फ बाहरी दिखावे में विधवा का रूप धारण करने में कोई फायदा नहीं है। लेकिन मैं मनसा,

सुब्रह्मण्य शास्त्री को अपना गुरु मान लिया, जो मदनपल्ली नामक गाँव में रहते थे। उन्हें अपने गुरु की सहायता से वेद एवं योग शास्त्र में गहरा ज्ञान प्राप्त हुआ। वेंगमाम्बा ने उनसे ज्ञान दीक्षा भी प्राप्त कर ली। वेंगमाम्बा अपने गुरु के प्रति बडी श्रद्धा रखती थी।

वाचा, कर्मणा एक विधवा का जीवन बिताएँगी। इसलिए आप ऐसे लोगों की निरर्थक बातों से विचलित न होइए। आप मुझे अपने आध्यात्मिक पथ पर आगे जाने की अनुमति दीजिए।'' अपनी बेटी के उत्तम विचार पर प्रसन्न पिताजी ने उनको साथ देने के लिए तैयार हो गए।

आध्यात्मिक आजादी

एक बार गाँव में एक साधु महराज आए थे। गाँव वालों ने उनसे मिलकर वेंगमाम्बा के बारे में कई झूठी बातें बतायी और यह भी संकेत किया कि वह विधवा का वेष धारण किए बिना रहती है। यह सुनकर साधु ने वेंगमाम्बा को अपने पास ले आने के लिए कहा। अपने सामने प्रस्तुत की गयी वेंगमाम्बा को देखकर साधु ने आज्ञा दी कि, ''तुम्हें विधवा का रूप धारण करना है।'' यह सुनकर वेंगमाम्बा ने नम्रता से कहा, ''महाशय, मैं आपकी आज्ञा को भगवान की आज्ञा मानती हूँ। लेकिन उसके पहले आप मेरी एक शंका दूर कीजिए।''

साधु ने चट से पूछा, ''तुम्हारी क्या शंका है?'' तब वेंगमाम्बा ने कहा, ''महाशय, मुझे इस पर सहमत है कि पति विहीन स्त्री को विधवा का जीवन बितानी है। लेकिन यह जानना चाहती हूँ कि किस शास्त्र में और किस स्थान में यह सूचित किया गया है कि पति विहीन नारी को विधवा का वेष धारण करनी है? यदि आपसे इसका सही जवाब मिले तो, मुझे विधवा का रूप धारण करने में कोई बाधा नहीं है।''

वेंगमाम्बा के इस कथन से साधु क्रोधित हो उठे। उन्होंने गुस्से में कहा, ''मुझसे शास्त्र विचार के बारे में सवाल उठाने के लिए तुम कौन हो?'' उसके बाद साधु ने अपने शिष्यों को वेंगमाम्बा का सिर मुंडन करने की आज्ञा दी। यह सुनकर वेंगमाम्बा ने बडे दुःख से अपने मन में सोचा कि ऐसे कच्चे आध्यात्मिक ज्ञान के साधुओं के कारण ही भगवान के नाम पर समाज में निरर्थक अंधविश्वास फैल रहे हैं। सदा भगवान के ध्यान में रहती मुझे क्यों इतनी असहनीय दुःख झेलनी पडती हैं?

अद्भुत कृपा

सिर मुंडन के बाद वेंगमाम्बा अपना इष्ट देव वेंकटेश्वर की प्रार्थना करती हुई पास में बहती नदी में नहाने के लिए उतरी। लेकिन उस समय वहाँ एक बडा आश्चर्य निकला। क्योंकि जब वेंगमाम्बा नहाकर बाहर आई, तब उसके सिर से निकाले गये बाल फिर दिखाई देने लगे। यह देखकर साधु और अन्य लोग अचम्बित हो गए। वे सब अब समझ लिए कि वेंगमाम्बा एक दैव योगिनी नारी है। उसके बाद वे सब उनके पाँव में पडकर आदर देने लगे। वेंगमाम्बा ने लोगों को समझाया कि ''जो नारी का निरादर करते हैं, नारी का अत्याचार करते हैं, वे भगवान के शत्रु बन जाते हैं। उनमें जितनी भी भक्ति क्यों न हो, भगवान उसे स्वीकार नहीं करेंगे।'' इस घटना के बाद वेंगमाम्बा की कीर्ति चारों ओर फैल गयी।

ज्ञान दीक्षा

वेंगमाम्बा ने रूपावतारम सुब्रह्मण्य शास्त्री को अपना गुरु मान लिया, जो मदनपल्ली नामक गाँव में रहते थे। उन्हें अपने गुरु की सहायता से वेद एवं योग शास्त्र में गहरा ज्ञान प्राप्त हुआ। वेंगमाम्बा ने उनसे ज्ञान दीक्षा भी प्राप्त कर ली। वेंगमाम्बा अपने गुरु के प्रति बडी श्रद्धा रखती थी। इसलिए अपनी प्रसिद्ध रचना श्रीवेंकटाचलमाहात्म्य में ऐसा उल्लेख किया है कि, ''मैं अपने महान गुरुवर सुब्रह्मण्यजी के पाद पंकज पर नमस्कार अर्पित करती हूँ। जिन्होंने मुझे समझाया कि सच्चे ज्ञान की प्राप्ति में हमारा प्रधान लक्ष्य भगवान मात्र है।'' **(क्रमशः)**

श्री कूर्मावतार

- डॉ.के.एम.भवानी

मत्स्य कूर्म वराहाद्यैः श्वेताद्यैर्मनोहरैः।
गोप्ता सर्वस्य लोकस्य वैकुंठैः शरणम् मम।।

समय-समय पर भक्तों को हानि पहुँचानेवाली हर समस्या को सुलझाने के लिए भिन्न-भिन्न रूपों में अवतरित होना भगवान श्रीहरि का सहज लक्षण है। कहा जाता है कि भगवान विष्णु ने समयानुसार दशावतार ही नहीं कई अंशावतारों को भी धारण किया। करीब सारे अवतारों को धारण करने का कारण दुर्जनों को दमन और सज्जनों की रक्षा ही रहा। लेकिन कूर्मावतार (कछुवा) ही एक ऐसा अवतार है जो सिर्फ देवताओं की रक्षा के लिए धारण किया गया है। यह भगवान विष्णु के दशावतारों में द्वितीय अवतार है।

श्रीहरि को कूर्मावतार क्यों धारण करना पडा?

एक बार देवराज इंद्र अपने ऐरावत पर चढ़कर अमरावति के गलियों में घूम रहा था। उसी समय अपने क्रोधी स्वभाव के लिए प्रसिद्ध दुर्वास मुनि वहाँ पहुँचा। इंद्र को देखकर मुनि अपने गले में रहा पारिजात के फूलों की माला को इंद्र को दिया तो इंद्र उस माला को खुद धारण किए बिना अपने ऐरावत के कुंभस्थल पर रखा। तब ऐरावत ने उस माला को नीचे गिराकर अपने पैरों के नीचे रौंद डाला। यह दृश्य देखकर दुर्वास बहुत क्रोधित होकर इंद्र को इस तरह शाप दिया- ''मैंने तुम्हें प्यार से दिया माला को तुम अहंकार से अस्वीकार करके मेरा अपमान किया। इसलिए बहुत जल्दी ही तेरा सारा वैभव और ऐश्वर्य सागर में मिल जाएगा। तुम अपना पद खो बैठोगे।''

मुनि के शापानुसार ही राक्षस गण अमरावति पर आक्रमण करके इंद्र को हरा दिए। बहुत सारे अमरों को मार दिए। बाकी देवगण अपने-अपने पद खोकर कमजोर हो गए। इंद्र अपने बचे हुए साथियों को लेकर ब्रह्म के पास गया और बचाने की प्रार्थना की। तब ब्रह्म ने उन सभी को साथ लेकर श्री महाविष्णु के पास गया। सारे देवगण विष्णु से उन्हें बचाने की प्रार्थना की तो श्रीहरि उनसे प्रसन्न होकर

श्री कूर्मजयंती (१८.५.२०१९) के संदर्भ में...

कहा कि अब राक्षसों को हराना मुश्किल है। उनसे लड़ने के लिए यह सही समय नहीं है। देवताओं को अमर बनने के लिए अमृत पीना जरूरी है। अमृत पाने के लिए क्षीर सागर को मंथना जरूरी है। यह महान कार्य सिर्फ देवगण नहीं कर सकते हैं इसलिए उन्हें राक्षसों से मैत्री करना जरूरी है। संधि करके राक्षसों से मित्रता निभाना है। समय को देखकर क्षीर सागर मंथन के लिए राक्षसों को मनाना है। श्रीहरि की बातों को सुनकर देवगण ऐसा ही करने का वचन दे कर चले गए।

कुछ समय तक देव-दानव मैत्री से रहे। बाद में इंद्र ने राक्षसों से कहा कि अगर हम सदा इसी प्रकार मित्रता निभाएँगे तो हमारे लिए असाध्य काम नहीं है। अगर हम क्षीर सागर को मथकर अमृत पाएँगे तो सदा के लिए अमर बन सकते हैं। इंद्र की बातों से प्रभावित होकर दानव क्षीर सागर मंथन के लिए राजी हो गए।

देव-दानव मिलकर एक शुभ अवसर पर मंथन पर्वत को क्षीर सागर में मजबूत से खड़ा होने के लिए मनाए। वासुकी नाग को मथनी बना दिए। देव नाग की पूँछ की ओर, दानव वासुकी के मुँह भाग को पकड़कर, वासुकी को मंथराचल से लपेटकर मंथन शुरू किए, लेकिन नीचे कोई आधार नहीं रहने के कारण मंथर पर्वत सागर में डूब गया। कितनी बार कोशिश करने पर भी मंथराचल पर्वत ऐसा ही डूबता रहा। तब देवगण भगवान श्रीहरि का स्मरण करके प्रार्थना की कि कोई उपाय करके उन्हें बचाने का रास्ता दिखाए। श्रीहरि ने उनकी प्रार्थना को सुनकर वहाँ प्रत्यक्ष होकर एक महान कूर्म का अवतार धारण किया और धीरे-धीरे सागर में जाकर मंथर पर्वत को अपने पीठ पर रखकर सहारा दिया तब पहाड़ स्थिर रह सका और मंथन कार्य सफल हुआ। इस प्रकार मंथन करने पर सागर में से ऐरावत, कामधेनु, कल्पवृक्ष आदि उत्पन्न हुए। बाद में भयंकर हालाहल निकला। तो महादेव शंकर भगवान ने उन्हें निगल कर कंठ

तक ही रखकर गरलकंठ बना। उसके बाद बहुत सुंदर रूपी लक्ष्मी माँ समुद्र से निकली और वर माला लेकर आई तो विष्णु भगवान ने उसे अपनी पत्नी के रूप में स्वीकार किया। अंत में अमृत निकला। तो दानव उन्हें ले जाने की कोशिश की तो विष्णु भगवान ने मोहिनी का रूप धारण कर देव-दानवों को मनाकर उस अमृत भांड को लेकर देवताओं को पिलाया। इस प्रकार श्रीहरि का कूर्मावतार संपन्न हुआ।

मंथानाचल धारण हेतो देवासुर परिपाला विभो
कूर्माकारा शरीरा नमो भक्तंते परिपालयमाम्।
नामस्मरण धन्योपायं नहि पश्यामो भवतरणे-
रामहरे कृष्ण हरे तव नाम वदामि सदा नृहरे।।

श्रीकूर्मम् - आंध्रप्रदेश

भगवान श्रीहरि के कूर्मावतार के रूप में प्रसिद्ध मंदिर आंध्रप्रदेश के श्रीकूर्मम् है। यह श्रीकाकुलम् जिले में है। कहा जाता है कि सारे विश्व में यह एक ही मंदिर है जहाँ भगवान विष्णु कूर्मावतार में है। माना जाता है कि सन् २वीं शताब्दी में इस मंदिर का निर्माण किया गया है। बाद ११वीं सदी में इसका पुनर्निर्माण भी किया गया है। यहाँ माँ भगवति लक्ष्मी 'कूर्मनायकी' कहकर पुकारा जाता है।

ओम कूर्मनाथाय नमः

२०१९, मार्च ०९ से १३ तक जुबिलीहिल्स, हैदराबाद प्रांत में ति.ति.देवस्थान के द्वारा निर्मित श्री वेंकटेश्वरस्वामीजी के नये मंदिर में विग्रह प्रतिष्ठापन, कलश स्थापन, महाकुंभाभिषेक के दृश्य

श्री वेंकटेश्वरस्वामीजी का क्षीराभिषेक

उभयदेवेरियों के साथ श्रीस्वामीजी (उत्सव मूर्तियाँ)

श्री वेंकटेश्वरस्वामीजी का चंदनाभिषेक

श्री वेंकटेश्वरस्वामीजी के मंदिर का छायाचित्र - जुबिलीहिल्स, हैदराबाद

पूर्णाहुति

पवित्र जल के साथ ति.ति.दे. अर्चकवृंद व उच्चताधिकारी जण

गर्भालय शिखर का महासंप्रोक्षण

तिरुमल तिरुपति देवस्थान

२०११, फरवरी २५ से मार्च ०६ तक तिरुपति कपिलतीर्थ में स्थित श्री कपिलेश्वरस्वामीजी को संपन्न वार्षिक ब्रह्मोत्सव की दृश्यमालिका

श्री कपिलेश्वरस्वामीजी के मंदिर में ध्वजारोहण

हंसवाहन पर श्री कपिलेश्वरस्वामीजी

अधिकारनंदिवाहन पर श्री कपिलेश्वरस्वामीजी,
बगल में कामधेनु पर श्री कामाक्षीदेवीजी

कल्पवृक्षवाहन पर श्री कामाक्षी सहित कपिलेश्वरस्वामीजी

भूतवाहन पर श्री कपिलेश्वरस्वामीजी और श्री कामाक्षीदेवीजी

सूर्यप्रभावाहन पर श्री कामाक्षी सहित कपिलेश्वरस्वामीजी

२०१९, फरवरी २४ से मार्च ०४ तक श्रीनिवासमंगापुरम् में श्री कल्याणवेंकटेश्वरस्वामीजी के लिए आयोजित वार्षिक ब्रह्मोत्सव की दृश्यमालिका

श्री कल्याणवेंकटेश्वरस्वामीजी के मंदिर में ध्वजारोहण

नवशेषवाहन पर उभयदेवेरियों के साथ श्री कल्याणवेंकटेश्वरस्वामीजी

सिंहवाहन पर श्री कल्याणवेंकटेश्वरस्वामीजी

हंसवाहन पर सरस्वती देवी अलंकार में श्री कल्याणवेंकटेश्वरस्वामीजी

सूर्यप्रभा में आरूढ़ श्री कल्याणवेंकटेश्वरस्वामीजी

कल्पवृक्षवाहन में कामितार्थ प्रदाता श्री कल्याणवेंकटेश्वरस्वामीजी

तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति

श्री वेंकटेश्वर सर्वश्रेयस् न्यास

"मानव सेवा ही माधव सेवा है" - इसी लक्ष्य के साथ, ति.ति.दे. विविध हितकर कार्यों का निर्वहण समाज के लिए कर रही है। इस क्रम में ति.ति.दे. ने १९४३ वर्ष में अनाथ बाल बच्चों के संरक्षणार्थ 'श्री वेंकटेश्वर बालमंदिर (तिरुपति) न्यास' की स्थापना की। आजकल 'श्री वेंकटेश्वर बालमंदिर न्यास', श्री वेंकटेश्वर जलनिधि योजना, कल्याणमस्तु न्यास, श्री वेंकटेश्वर समाचार सांकेतिक न्यास आदि को अपने में मिलाकर 'श्री वेंकटेश्वर सर्वश्रेयस् न्यास' के रूप में परिणत हुआ है।

श्री वेंकटेश्वर सर्वश्रेयस् न्यास के लक्ष्य

01) अनाथ बाल बालिकाओं, वृद्ध, निराश्रित, अभागे, निर्धन एवं निर्बलवर्ग के व्यक्तियों की अभिवृद्धि, रक्षा, उनके कुशल क्षेम के लिए धर्मशालाओं एवं आवास प्रदत्त करना। अनाथ एवं निर्धन विद्यार्थी-विद्यार्थियों को आर्थिक रूप से सशक्त करना।

02) दिव्यांगों एवं मनोरोगियों के लिए आवश्यक चिकित्सा की सुविधाओं की व्यवस्था करना एवं उनके जीवन शैली को सुधारना। इस प्रक्रिया में किसी वर्ग एवं वर्ण भेद को त्यागकर सभी लोगों को एक ही स्तर में स्वीकार करना।

03) बाढ़, अकाल जैसी प्रकृतिक विपत्ति के संभवित समय में, अग्निफैलान जैसी अवांछनीय विपत्ति के उठने पर, तक्षण उनकी सहायता के लिए तैयार रहना।

04) जो बधे बहरे या मूक होते हैं, उनकी उन्नति के लिए पुनर्वास केन्द्रों की व्यवस्था करना।

05) उपर्युक्त लोप से ग्रस्त ग्रामीण बाल बच्चों के लिए आवश्यक उपकरणों का वितरण करने के साथ-साथ उनको शिक्षा प्रदान करना।

06) समाज में पीने के पानी, जो अत्यधिक आवश्यक पेय पदार्थ है, उसको उपलब्ध कराना, तिरुमल पंचायती तथा तिरुपति नगर पालिका के लिए आवश्यक जल संसाधन की पूर्ति के लिए पुल एवं तालाबों का निर्माण करना। पानी के मितव्यय के लिए आवश्यक कार्यवाही करना।

07) पाठ्य पुस्तकों के साथ, इंटरनेट (अंतर्जाल) जैसी आधुनिक, सांकेतिक सुविधाओं को उपलब्ध कराकर, उसके द्वारा हमारे देश का इतिहास, सांस्कृतिक दाय प्राप्त संपदा को भावी पीढ़ियों तक पहुँचाना।

08) समाज में शिष्टाचार तथा नैतिक मूल्यों के विकास के लिए युवा पीढ़ी में आत्मविश्वास को बढ़ाना।

09) विवाह संपन्न कराने के द्वारा हितैषी के रूप में वधू-वर को आत्मविश्वास तथा गौरव के साथ जीवनयापन करने के लिए योग्य बनाना।

10) जो व्यक्ति उपर्युक्त कार्यक्रमों में कार्यरत हैं, उन व्यक्तियों तथा संस्थाओं की मदद करना। जो भी कार्य चालू हैं उनको बिना किसी लाभ की अपेक्षा किये, लक्ष्यसिद्धि को प्राप्त करना।

श्री वेंकटेश्वर सर्वश्रेयस् न्यास के लिए इस रूप में चंदा भेजिए...

01) इस योजना के लिए कम से कम रु.१,०००/- भेजें।

02) अगर, चंदा रु.१०००/- से कम हो, तब उसे श्रीवारि हुण्डी के खाते में जमा किया जाता है और चंदादार को इसके बारे में कोई सूचना नहीं दी जाती है। सभी चंदादारों की चंदा किसी राष्ट्रीय बैंक में जमा की जाती हैं और उस पर जो सूद मिलता है, उसे उक्त योजनाओं के लिए खर्च किये जाते हैं। आप, अपनी चंदा को किसी राष्ट्रीय बैंक से, चेक या डिमांड ड्राफ्ट के द्वारा 'श्री कार्यनिर्वहणाधिकारी, श्री वेंकटेश्वर सर्वश्रेयस् न्यास, ति.ति.दे., तिरुपति' के नाम पर लेकर, 'प्रधान लेखाधिकारी (चीफ़ अकौण्ट्स आफ़ीसर), ति.ति.दे., तिरुपति - ५१७ ५०७' के नाम पर भेज सकते हैं।

अन्य विवरण के लिए दूरभाष - ०८७७-२२६४२५८ को संपर्क करें।

श्री वेदव्यास भट्टर

- श्रीमती शिल्पा केशव रांदड

जन्मनक्षत्र - वैशाख मास, अनुराधा नक्षत्र

अवतार स्थल - श्रीरंगम्

आचार्य - श्री गोविंदाचार्य स्वामीजी

परमपद प्राप्त स्थान - श्रीरंगम्

श्री वेदव्यास भट्टर श्री कूरेश स्वामीजी के यशस्वी पुत्र और श्री पराशर भट्टर स्वामीजी के अनुज थे। उन्हें श्री राम पिल्लै, श्री राम सूरी आदि नामों से भी जाना जाता है। सुदर्शन सूरी (श्रुत प्रकाशिक भट्टर), जिन्होंने श्रीभाष्य पर व्याख्यान लिखा है, वे श्री वेदव्यास भट्टर के वंशज हैं। श्री कूरेश स्वामीजी और आण्डाल के यहाँ श्रीरंगनाथ भगवान के प्रसाद से दोनों ही भट्टर बंधुओं का जन्म हुआ। एक रात जब श्री कूरेश स्वामीजी और आण्डाल बिना प्रसाद पाये लेटे थे, तब वे मंदिर की अंतिम नैवेद्य घंटी सुनते हैं। आण्डाल भगवान से कहती है ''यहाँ आपके अनन्य भक्त, श्री कूरेश स्वामीजी बिना प्रसाद पाये बैठे हैं और आप वहाँ उत्तम भोग का अन्दन ले रहे हैं।'' यह जानकर श्रीरंगनाथ भगवान उत्तम नम्बि द्वारा श्री कूरेश स्वामीजी और आण्डाल को अपना प्रसाद सभी साज-सामान के साथ भिजवाते हैं। प्रसाद को आते हुए देखकर अळवान चकित रह जाते हैं। वे तुरंत आण्डाल से पूछते हैं - ''क्या आपने भगवान से प्रार्थना की थी'' और आण्डाल उनके द्वारा किये हुए अनुरोध को स्वीकार करती है। श्री कूरेश स्वामीजी उनके द्वारा प्रसाद के लिए भगवान से किये हुए आग्रह से व्याकुल हो जाते हैं। वे केवल दो मुट्ठी प्रसाद ही स्वीकार करते हैं, कुछ पाकर, शेष प्रसाद आण्डाल को दे देते हैं। उस दो मुट्ठी प्रसाद के फलस्वरूप उन्हें दो सुंदर बच्चों का आशीर्वाद प्राप्त होता है।

वार्षिक तिरुनक्षत्र (१९.०५.२०१९) के संदर्भ में...

दोनों बालकों के जन्म के १२ दिन बाद श्रीरामानुजस्वामीजी, श्री गोविन्दाचार्य स्वामीजी और सभी शिष्यों के साथ आळवान के घर पधारते हैं। वे एम्बार से बालकों को बाहर लाने के लिए कहते हैं। बालकों को लाते हुए, एम्बार उनके कानों में द्वय महामंत्र का उच्चारण करते हैं और उन्हें श्रीरामानुजस्वामीजी को सौंप देते हैं। श्रीरामानुजस्वामीजी तुरंत पहचान जाते हैं कि वे दोनों द्वय मंत्रोपदेश प्राप्त कर चुके हैं और एम्बार से कहते हैं कि वे ही उनके आचार्य हो। एम्बार सहर्ष उसे स्वीकार करते हैं और उन्हें संप्रदाय के सभी दिव्य सिद्धांतों का उपदेश देते हैं। तब एम्पेरुमानार, सनातन धर्म में ऋषि पराशर और ऋषि वेदव्यास के योगदान के लिए उनकी स्मृति में बालकों के नाम पराशर भट्टर और वेदव्यास भट्टर रखते हैं। इस तरह वे आलवन्दार के प्रति अपनी एक प्रतिज्ञा पूर्ण करते हैं, जहाँ उन्होंने प्रतिज्ञा की थी कि वे ऋषि पराशर और वेदव्यास के प्रति आभार प्रकट करने के लिए कोई कार्य करेंगे।

इस संसार में सब कुछ इतना अल्पकालिक है कि हो सकता है तुम लोग आचार्य के मठ तक ठीक तरह से पहुँच न पाओ (तुम्हें रास्ते में कुछ भी हो सकता है)। इसलिए मैं स्वयं ही तुम्हें अष्टाक्षर मंत्र का अर्थ सिखाता हूँ'' और फिर उन दोनों को वह अर्थ समझाते हैं। एक श्रीवैष्णव को कैसा होना चाहिए - दूसरों के आत्मिक कल्याण के प्रति अति दयालू और दूसरों से अलग, श्री कूरेश स्वामीजी इस बात का श्रेष्ठ उदाहरण हैं।

दोनों भाइयों में से श्री पराशर भट्टर स्वामीजी अल्प आयु तक जीवित रहे और संसार छोड़ने की अपनी तीव्र इच्छा से परमपद प्रस्थान किया। आण्डाल (भट्टर की माता) भट्टर के अंतिम क्षणों में बड़ी उदार थी, और भट्टर के अंतिम संस्कारों की देखरेख आनंद सहित करती हैं, इस विचार से कि भट्टर स्वयं भगवान श्रीमन्नारायण की नित्य सेवा करने के लिए परमपद जाना चाहते थे। अंतिम संस्कारों के पूर्ण होने पर, वेदव्यास भट्टर घर लौटकर पराशर भट्टर के वियोग में व्याकुल होकर रोने लगते हैं। आण्डाल वेदव्यास भट्टर को सांत्वना देती है और उनसे पूछती है क्या वे पराशर भट्टर के परमपद प्रस्थान पर उनसे ईर्ष्या करते हैं। वेदव्यास भट्टर तुरंत अपनी गलती को समझ जाते हैं, स्वयं को सांत्वना देते हैं, और अपनी माता से क्षमा याचना करते हैं और पराशर भट्टर के परमपद गमन का उत्सव जारी रखते हैं।

पेरिय पेरुमाल वेदव्यास भट्टर को अपनी सन्निधि में आमंत्रित करते हैं और उनसे कहते हैं कि ''ऐसा मत सोचो कि पराशर भट्टर ने तुम्हें छोड़ दिया है। मैं यहाँ तुम्हारे पिता के समान ही हूँ।'' तब वेदव्यास भट्टर संप्रदाय को श्रीवेदांती स्वामीजी जैसे अन्य दिग्गजों के साथ नेतृत्व करते हैं।

हमारे व्याख्यानों में कई उदाहरण है जहाँ श्री वेदव्यास भट्टर की महिमा को देखा जा सकता है। उनमें से कुछ हम अब देखते हैं -

१. तिरुमालै ३७ - श्री पेरियवाच्चन् पिल्लै स्वामीजी की व्याख्यान - इस पाशुर में, श्री भक्तांघ्रिरेणु स्वामीजी समझाते हैं कि श्रीरंगनाथ भगवान हमारे नित्य संबंधी हैं और वे हर समय हमारी रक्षा करते हैं। इस संदर्भ में यह देखा गया है कि जब वेदव्यास भट्टर पीड़ा की अवस्था से गुजर रहे थे, श्री पराशर भट्टर स्वामीजी उन्हें यह सिद्धांत समझाते हैं और उन्हें पूर्णतः पेरिय पेरुमाल के आश्रित रहने के लिए कहते हैं।

२. मुदल तिरुवन्दादि ४ - श्री कलिवैरिदास स्वामीजी / श्री पेरियवाच्चन पिल्लै स्वामीजी की व्याख्यान - सरोयोगी स्वामीजी बताते हैं कि अगस्त्य, पुलस्त्य, दक्ष और मार्कंडेय को रुद्र भगवत विषय समझा रहे थे (जैसे कि वे भगवान के विषय में सब कुछ जानते हैं)। जब वेदव्यास भट्टर रुद्र पर इस प्रकार व्यंग करते हैं, तब श्री पराशर भट्टर स्वामीजी कहते हैं ''जब रुद्र के मस्तिष्क पर तमोगुण का प्रभाव रहता है वह विमूढ हो जाते हैं, पर अब वह भगवत विषय के अनुसरण में लगे हुये हैं- इसलिए अब उनकी आलोचना न करो।''

३. श्रीसहस्रगीति - श्री कलिवैरिदास स्वामीजी ईडु व्याख्यान - इस पाशुर में, श्री शठकोप स्वामीजी तिरुमन्त्र का अर्थ समझाते हैं। इस परिपेक्ष्य में नम्पिल्लै एक सुंदर दृष्टांत बताते हैं। अष्टाक्षर मंत्र का अर्थ केवल आचार्य से ही सुनना चाहिए। एक बार श्री कूरेश स्वामीजी इस पाशुर को समझाते हुए कालक्षेप में, अपने दोनों पुत्रों की उपस्थिति का अनुभव करते हैं। वे उनसे कहते हैं कि वे लोग श्री गोविंदाचार्यजी (उनके आचार्य) के पास जाकर उनसे इसके अर्थ समझे। वे दोनों उनकी बात मानकर वहाँ से जाने लगते हैं। परंतु फिर श्री कूरेश स्वामीजी उन्हें बुलाकर कहते हैं ''इस संसार में सब कुछ इतना अल्पकालिक है कि हो सकता है तुम लोग आचार्य के मठ तक ठीक तरह से पहुँच न पाओ (तुम्हें रास्ते में कुछ भी हो सकता है)। इसलिए मैं स्वयं ही तुम्हें अष्टाक्षर मंत्र का अर्थ सिखाता हूँ'' और फिर उन दोनों को वह

अर्थ समझाते हैं। एक श्रीवैष्णव को कैसा होना चाहिए - दूसरों के आत्मिक कल्याण के प्रति अति दयालू और दूसरों से अलग, श्री कूरेश स्वामीजी इस बात का श्रेष्ठ उदाहरण हैं।

४. श्रीसहस्रगीति - कलिवैरिदास स्वामीजी ईडु व्याख्यान (प्रस्तावना खंड) - इस दशक में श्री शठकोप स्वामीजी तिरुमालीरुन्चोलै अळगर के अनुभवों को नियंत्रित रखने में असमर्थ हैं। यहाँ वेदव्यास भट्टर पराशर भट्टर से एक प्रश्न पूछते हैं। ''आल्वार क्यों इतनी पीड़ा में हैं और अर्चावतार भगवान के दर्शन अनुभव करने में असमर्थ हैं जबकि परमपद या विभव (जो अवतार बहुत समय पहले हुए थे) के समान न होकर अर्चावतार में भगवान ठीक हमारे सामने हैं?'' पराशर भट्टर कहते हैं ''अल्पबुद्धि व्यक्ति के लिए भगवान के ५ अलग रूप (पर, व्यूह, विभव, अर्चा, अंतर्यामी) एक दूसरे से भिन्न है। परंतु उनके लिए जिन्होंने सिद्धांतों को पूर्णतः समझ लिया है सभी रूप एकमात्र उन्ही भगवान का प्रतिनिधित्व करते हैं, वे सभी रूप सारे गुणों से परिपूर्ण हैं। परंतु अब, आल्वार तिरुमालीरुन्चोलै कल्अळगर की सुंदरता से अभिभूत हैं और वे अपने गुणानुभाव और भावनाओं को नियंत्रित रखने में असमर्थ हैं।''

५. श्रीसहस्रगीति - कलिवैरिदास स्वामीजी ईडु व्याख्यान - जब पराशर भट्टर तिरुक्कोलूर के वैत्तमानिधि भगवान के मंदिर के आसपास के सुंदर बगीचे आदि का वर्णन करते हैं, वेदव्यास भट्टर उन्हें एम्बार द्वारा दिए गए उस विस्तृत वर्णन का स्मरण कराते हैं जहाँ आल्वार का मन दिव्यदेश की सुंदरता देख कर अति आनंदित हो जाता है।

६. श्रीसहस्रगीति-कलिवैरिदास स्वामीजी ईडु व्याख्यान - जब दोनों भट्टर विवाह के लिए योग्य हुए, आण्डाल आळवान से कहती है कि वे जाये और जाकर पेरिय पेरुमाल को इसके बारे में बताये। आळवान कहते हैं ''भगवान के परिवार के लिए हम क्यों चिंता करें?'' - वे इस पूर्णता से भगवान को समर्पित थे कि किसी भी तरह के स्व-प्रयासों में संलग्न नहीं होते थे। जब आल्वान पेरिय पेरुमाल के समक्ष गये, पेरिय पेरुमाल स्वयं उनसे पूछते हैं कि क्या वे कुछ कहना चाहते हैं। आल्वान प्रतिउत्तर में कहते हैं ''अन्य लोग कहते हैं, दोनों भाइयों का विवाह आब हो जाना चाहिए'' और फिर भगवान उनके विवाह की व्यवस्था करते हैं।

इस तरह हमने वेदव्यास भट्टर के गौरवशाली जीवन की कुछ झलक देखी। वे भागवत निष्ठा में पूर्णतः स्थित थे और एम्पेरुमानार के बहुत प्रिय थे। हम सब उनके श्रीचरणकमलों में प्रार्थना करते हैं कि हम दासों को भी उनकी अंश मात्र भागवत निष्ठा की प्राप्ति हो।

वेदव्यास भट्टर की तनियन

पौत्रं श्री राममिश्रास्य श्रीवत्सांगस्य नन्दनम्।
रामसूरीं भजे भट्टपराशरवरानुजम्।।

तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति।

पाठकों केलिए सूचना

हर महीने सप्तगिरि मासिक पत्रिका आपको समय पर नहीं मिलता, तो आप प्रधान संपादक कार्यालय के कार्यरत समय में निम्न लिखित दूरभाष से संपर्क कर सकते हैं। पत्रिका तुरंत भेजा जायेगा।

आप फोन पर आपका चंदा नंबर, पता, अपने प्रांत का पोस्टल पिन कोड, मोबाइल नंबर सही ढंग से बताइये।

प्रधान संपादक कार्यालय का दूरभाष :
०८७७-२२६४५४३.

श्री दाशरथि स्वामीजी

- श्री चन्द्रकान्त घनश्याम लहोती

जन्मनक्षत्र - पुनर्वसु, मेष मासे
अवतार स्थल - पेट्टै
आचार्य - श्रीरामानुजस्वामीजी
परमपद प्राप्त स्थल - श्रीरंगम्
कार्य - घाटी पंचकम, रहस्य त्रयं (अब उपलब्ध नहीं हैं)

आनन्द धीक्षिधर और नाच्चियारम्मा के पुत्र के रूप में जन्में इनका नाम दाशरथि रखा गया। ये श्रीरामानुजस्वामीजी के सम्बन्धीक हैं। आप रामानुजन पोण्णदि, यतिराज पादुका, श्रीवैष्णव दासर, तिरुमरुमार्भन और मुधलियाण्डान (यानि श्रीवैष्णवों में मार्ग दर्शक) के नाम से अधिक विख्यात हुए। वह श्रीरामानुजस्वामीजी के चरण पादुका और त्रिदण्ड के नाम से भी जाने जाते हैं। ध्यान देना - श्री कूरेश स्वामीजी और श्री दाशरथि स्वामीजी, श्रीरामानुजस्वामीजी को इतने प्रिय थे कि वह उनसे कभी अलग हो ही नहीं सकते थे - श्री कूरेश स्वामीजी, श्रीरामानुजस्वामीजी के जल पवित्रं (श्रीरामानुजस्वामीजी के त्रिदण्ड पर जो झण्डा लगा हैं) से जाने जाते हैं।

श्रीरामानुजस्वामीजी, श्री दाशरथि स्वामीजी को उनके भगवद्/भागवत निष्ठा (भगवान और उनके भक्तों के प्रति स्नेह) के कारण बहुत पसन्द करते थे। जब श्रीरामानुजस्वामीजी ने सन्यास लिया तब उन्होंने यह घोषणा की कि उन्होंने सब कुछ त्याग किया, सिवाय दाशरथि ऐसी श्री दाशरथि स्वामीजी कि महिमा थी। श्रीरामानुजस्वामीजी के सन्यास ग्रहण करते ही श्री कूरेश स्वामीजी और श्री दाशरथि स्वामीजी उनके पहिले शिष्य बने। दोनों ने शास्त्र (उभय वेदान्त-संस्कृत और अरूलीचेयल) और उसके तत्त्व को श्रीरामानुजस्वामीजी से ही सीखा। जब श्रीरामानुजस्वामीजी कांचीपुरम से श्रीरंगम् के लिये प्रस्थान किया तो वह दोनों भी उनके साथ निकल गये। श्रीरामानुजस्वामीजी की आज्ञानुसार श्री दाशरथि स्वामीजी ने मंदिर के देख रेख का शासन पूर्णतः अपने हाथों में लिया और यह सुनिश्चित किया कि मंदिर का सभी कार्य सही तरीके से हो रहा है।

वार्षिक तिरुनक्षत्र (२०.०५.२०१९) के संदर्भ में...

जब श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी ने श्रीरामानुजस्वामीजी को चरम श्लोक का अर्थ समझाया तब श्री दाशरथि स्वामीजी ने श्रीरामानुजस्वामीजी से यह उन्हें भी सिखाने के लिये प्रार्थना की। श्रीरामानुजस्वामीजी ने श्री दाशरथि स्वामीजी को श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी के पास जाकर उन्हें प्रार्थना करने के लिये कहा। श्री दाशरथि स्वामीजी श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी के तिरुमाली में ६ महीने तक रहकर उनकी विनम्रता पूर्वक सेवा की। ६ महीने के पश्चात् जब श्री दाशरथि स्वामीजी ने श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी को चरम श्लोक का अर्थ सिखाने के लिये प्रार्थना किया तो स्वामीजी ने कहा कि श्रीरामानुजस्वामीजी ही स्वयं उन्हें सिखायेंगे एक बार उनमें पूर्णत आत्म गुण आ जाये। श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी ने अपने चरण कमल श्री दाशरथि स्वामीजी के मस्तक पर रखा और जाने के लिये कहा। श्रीरामानुजस्वामीजी ने श्री दाशरथि स्वामीजी को आते देख उनके भाव से बहुत खुश हुये और एक ही बार में उन्हें चरम श्लोक का श्रेष्ठ अर्थ समझाया।

श्री दाशरथि स्वामीजी का श्रीरामानुजस्वामीजी के प्रति पूर्णतः समर्पण इस चरित्र के द्वारा समझा जा सकता हैं। एक बार श्री महापूर्ण स्वामीजी कि बेटी श्री अतुलांबाजी अपने सास के पास जाती हैं और कहती हैं कि नदी में स्नान करने के लिये जाते समय उनके साथ कोई आए सुरक्षा/सहयोग के हिसाब से। उनकी सास कहती हैं ''तुम्हें स्वयं अपने साथ सहायक को लाना होगा।'' श्री अतुलांबाजी अपने पिताजी के पास जाकर उनसे एक सहायक का प्रबन्ध करने के लिए कहती हैं। श्री महापूर्ण स्वामीजी कहते हैं क्योंकि वे पूर्णतः श्रीरामानुजस्वामीजी पर निर्भर हैं, उन्हें उनके पास जाकर ही विनती करनी होगी। श्रीरामानुजस्वामीजी इधर-उधर देखते हैं और श्री दाशरथि स्वामीजी को देखकर उन्हें श्री अतुलांबाजी के साथ सहायक के तौर पर जाने के लिये कहते हैं। श्री दाशरथि स्वामीजी आनंदित होकर अपने आचार्य की आज्ञा का पालन करते हुए श्री अतुलांबाजी के साथ चले गये। वह निरन्तर उनकी मदद करते थे। श्री अतुलांबाजी के ससुरालवाले श्री दाशरथि स्वामीजी (जो बड़े विद्वान और श्रीरामानुजस्वामीजी के प्रमुख शिष्यों में से एक) को उनके तिरुमाली में इतना नीच काम करते देख दुःखी होने लगे और उन्हें यह बन्द करने के लिये कहा। श्री दाशरथि स्वामीजी ने तुरन्त कहा कि यह श्रीरामानुजस्वामीजी कि आज्ञा है और वह इसका पालन करेंगे। वह तुरन्त श्री महापूर्ण स्वामीजी के पास जाते हैं जो उन्हें श्रीरामानुजस्वामीजी के पास भेजते हैं। श्रीरामानुज स्वामीजी ने कहा ''आपको एक सहायक की जरूरत थी और मैंने एक भेज दिया अगर आपको वह नहीं चाहिए तो उसे वापस भेज दीजिये।'' उनको अपनी गलती का एहसास होगया और श्री दाशरथि स्वामीजी को उनके यहाँ काम करने से रोक दिया। उनको श्री महापूर्ण स्वामीजी, श्रीरामानुजस्वामीजी, श्री दाशरथि स्वामीजी और श्री अतुलांबाजी की महिमा का पता चला और फिर उन्होंने श्री अतुलांबाजी का अच्छा ध्यान रखा। यह घटना श्री दाशरथि स्वामीजी की बढाई को दर्शाता है जहाँ वह अपने आचार्य के शब्दों का पूरी तरह पालन करते हैं। हम यह आसानी से समझ सकते हैं कि अगर कोई श्रीरामानुजस्वामीजी के चरण पादुका घोषित हैं तो उसमें यह सब अच्छे गुण होना चाहिये और श्री दाशरथि स्वामीजी इन सब अच्छे गुणों के सारसंग्रह थे।

शैव राजा के अत्याचार से श्री दाशरथि स्वामीजी श्रीरामानुजस्वामीजी के साथ मेल्कोटे (तिरुनारायणपुरम्) का भ्रमण किया। मितुलापुरी सालग्राम नामक एक जगह में बहुत लोग रहते थे जो वैदिक धर्म के खिलाफ थे। श्रीरामानुजस्वामीजी ने श्री दाशरथि स्वामीजी को कहा नदि के उस स्थान को अपने चरणों से स्पर्श करें जहाँ से नदि उस गाँव में आती है और लोग वहाँ स्नान करते हैं। श्री दाशरथि स्वामीजी कृपा करते हैं और जब उस नदि में स्नान करते हैं जो अब श्री दाशरथि स्वामीजी के श्रीपाद का सम्बन्ध हैं सभी पवित्र हो जाते हैं। अगले दिन सभी श्रीरामानुजस्वामीजी के पास आकर उनके शरण हो जाते हैं। अतः हम यह समझ सकते हैं कि पवित्र श्रीवैष्णव के श्रीपाद तीर्थ से सब लोग पवित्र हो जाते हैं।

कंथादै आण्डान जो श्री दाशरथि स्वामीजी के पुत्र हैं श्रीरामानुजस्वामीजी कि आज्ञा लेकर उनके लिये एक अर्चा विग्रह बनाते हैं। श्रीरामानुजस्वामीजी इस विग्रह को गले से लगाते हैं और इस पर बहुत प्रेम आता है। यह विग्रह बाद में उनके अवतार स्थल श्रीपेरुंबुदूर में तै पुष्यम् (यह दिन आज भी श्री पेरुंबुदूर में गुरु पुष्यम् नाम से मनाया जाता है) के दिन रखते हैं। यह विग्रह स्वयं श्रीरामानुजस्वामीजी को पसन्द थी।

श्री दाशरथि स्वामीजी के उपदेशों और कीर्ति को व्याख्यानों में बहुत जगह प्राप्त हैं। हम उनमें से कुछ अब देखेंगे।

१. सहस्रगीति २.९.२ - श्री कलिवैरिदास ईडु व्याख्यान - श्री दाशरथि स्वामीजी कि उदारता को यहाँ इस घटना में बहुत सुन्दरता से प्रगट किया है। एक बार श्री दाशरथि स्वामीजी के एक शिष्य श्री गोविंदाचार्य स्वामीजी के पास जाता है उस समय श्री दाशरथि स्वामीजी नगर से बाहर गये हुये थे। श्री गोविंदाचार्य स्वामीजी उस श्रीवैष्णव से कैंकर्य लेना स्वीकार करते हैं और यह सोचकर कि उसे

आचार्य सम्बन्ध प्राप्त नहीं हुआ है उसे पञ्च संस्कार की दीक्षा देते हैं और उसे अच्छा ज्ञान भी देना शुरू कर देते है। जब श्री दाशरथि स्वामीजी लौट कर आते हैं वह श्रीवैष्णव भी लौट कर उनकी सेवा करने लगता है। जब श्री गोविंदाचार्य स्वामीजी को यह पता चलता है तो वह दौड़ कर जाकर श्री दाशरथि स्वामीजी से कहते हैं ''मुझे यह नहीं पता था कि वह आपका शिष्य है और मुझे इस अपचार के लिये क्षमा कीजिए।'' श्री दाशरथि स्वामीजी शान्त रीति से उत्तर देते हैं ''अगर कोई कुवें में गिरता हैं और उसे दो लोग बाहर निकालते हैं तो वह बहुत आसानी से बाहर आजायेगा। उसी तरह यह व्यक्ति संसार में हैं अगर हम दोनों इसे बाहर निकाले तो यह फायदा ही है।'' इस तरह का पवित्र हृदय देखना बहुत मुश्किल है जो हमें श्री दाशरथि स्वामीजी में निरन्तर देखने को मिलता है।

२. सहस्त्रगीति ३.६.९ - श्री कलिवैरिदास ईडु व्याख्यान - इस पादिगा में भगवान के अर्चावतार के कीर्ति को दर्शाया गया है। श्री दाशरथि स्वामीजी यह समझाते हैं कि ''यह मत सोचो कि परमपदनाथ अर्चावतार का रूप यहाँ अपने भक्तों को खुश करने के लिये लेते हैं बल्कि यह सोचो कि यह भगवान का अर्चावतार बुहत महत्त्व का हैं और वह स्पष्ट है कि वो ही परमपद में पर वासुदेव हैं।''

३. सहस्त्रगीति ५.६.७. - श्री कलिवैरिदास ईडु व्याख्यान- इस पादिगा में भगवान का सर्व व्यापकत्वं समझाया गया हैं। यहाँ परांकुश नायकी (श्री शठकोप स्वामीजी एक कन्या के भाव में) कहते हैं कि भगवान अपने संबंधियों का भी नाश कर देते हैं। श्री दाशरथि स्वामीजी इसकी एक सुन्दर व्याख्या करते हैं ''भगवान अपनी पवित्र सुन्दरता दिखा कर'' (जो उनकी तरफ आकर्षित होते हैं) उन्हें पूरी तरह पिगला देते हैं - नाश करते हैं।

४. सहस्त्रगीति ६.४.१०. - श्री कलिवैरिदास ईडु व्याख्यान - यहाँ श्री दाशरथि स्वामीजी का अर्चावतार के प्रति लगाव और चिन्ता श्री कलिवैरिदास स्वामीजी समझाते हैं। श्री कलिवैरिदास स्वामीजी श्री वेदान्त स्वामीजी का वर्णन बताते हैं जिसमें श्री गोविंदाचार्य स्वामीजी और श्री दाशरथि स्वामीजी हैं। इस संसार में बहुत से लोग हैं जो भगवान को पसन्द नहीं है। अर्चावतार भगवान बहुत मृदु स्वभाव के हैं और अपने आप इन भक्तों पर ही पूर्णतः निर्भर रखते हैं। ब्रह्मोत्सव के समापन के बाद श्री गोविंदाचार्य स्वामीजी और श्री दाशरथि स्वामीजी मिलते हैं, एक दूसरे को आदर देते हैं, गले लगते हैं और खुशी प्रगट करते हैं कि श्रीरंगनाथ भगवान उत्सव के बाद अपने आस्थान में सुरक्षित पहुँच गये हैं। वह अपने पूर्वाचार्यों के स्वभाव को जो हमेशा भगवान के मंगलाशासन के तरफ ध्यान देते थे सच मानते थे।

५. सहस्त्रगीति ६.४.१०. - श्री कलिवैरिदास ईडु व्याख्यान - जब पराशर भट्टर स्वामीजी श्री कूरेश स्वामीजी से ''श्रीरुमा मानिसर'' (सिरु यानि छोटा और मा यानि बड़ा - कैसे एक हीं व्यक्ति में छोटा और बड़ा आता हैं) के बारें पूछते हैं तब श्री कूरेश स्वामीजी कहते हैं श्री दाशरथि स्वामीजी, श्री देवराजमुनि स्वामीजी और श्री गोविंदाचार्य स्वामीजी अवस्था में छोटे हैं (और हमारे जैसे ही हैं भोजन पर निर्भर अपना जीवन चलाने के लिये) परन्तु भगवान के प्रति भक्ति में वें नित्य सूरियों से भी बड़े हैं - इस तरह छोटा और बड़ा दोनों गुण एक हीं व्यक्ति में हैं।

६. सहस्त्रगीति ९.२.८. - श्री कलिवैरिदास ईडु व्याख्यान - श्रीरंगम् में श्री जयन्ती पुरप्पाडु के समय वंगीप्पुरत्तु नम्बी अहीर गोप कन्याओं के समूह में मिलकर वहाँ भगवान की पूजा करते हैं। श्री दाशरथि स्वामीजी उनसे पूछते हैं कि उन्होंने क्या कहा जब वह उस समूह में थे। नम्बी कहते हैं ''मैंने कहा विजयस्व।'' श्री दाशरथि स्वामीजी कहते हैं जब आप उन गोप कन्याओं के समूह में हैं तब आप उन्हें उनकी भाषा में बढ़ाई करना था नाकि कठिन संस्कृत में।

इस तरह हमने श्री दाशरथि स्वामीजी के सुन्दर जीवन के बारे में कुछ देखा। वह पूर्णतः भागवत निष्ठावाले थे और स्वयं श्रीरामानुजस्वामीजी के करीब थे। हम उनके चरण कमलों में प्रार्थना करते हैं कि उनकी तरह थोड़ी सी हम में भी भागवत निष्ठा आ जायें।

श्री दाशरथि स्वामीजी कि तनियन

पादुके यतिराजस्य कथयन्ति यदाख्यया।
तस्य दाशरथेः पादौ शिरसा धारयाम्यहम्।।

भारत के प्रसिद्ध १६ हनुमान मंदिर

श्री हनुमज्जयंती (२९.५.२०१९) के संदर्भ में...

- श्री ज्योतीन्द्र के. अजवालिया

हमारा भारत नदियों और मंदिरों का मूलक है। पूरे भारत में कई सारी नदियाँ और कई सारे अति भव्य मंदिर स्थापित है। आज हम यहाँ इस लेख में भारत के विभिन्न हिस्सों में स्थित प्रसिद्ध १६ हनुमान मंदिरों के बारे में जानकारी पायेंगे।

इनमें से हर मंदिर की अपनी एक विशेषता है, कोई मंदिर अपनी प्राचीनता के लिए विख्यात है, तो कोई अपनी भव्यता के लिए प्रसिद्ध है। जब की कई मंदिर अपनी अनोखी हनुमान मूर्तियों के लिए महशूर है।

तो आये देखे हम भारत के कई प्रसिद्ध हनुमानजी मंदिर के बारे में...

१. हनुमान मंदिर इलाहाबाद (उत्तरप्रदेश)

इलाहाबाद का यह हनुमानजी मंदिर में हनुमानजी लेटे हुए है। मंदिर छोटा सा है लेकिन अति प्राचीन है। भारत का एक मात्र यही मंदिर है जिस में हनुमानजी लेटी हुई मुद्रा में है। यहाँ की प्रतिमा २० फीट लम्बी है। जल वर्षा के दिनों में बाढ आ जाती है और यहाँ का स्थान जलमग्न हो जाता है, तब हनुमानजी की इस मूर्ति को कही और ले जाकर सुरक्षित रखा जाता है। समय आने पर इस प्रतिमा को पुनः यहाँ लाया जाता है।

२. सालासर बालाजी हनुमान मंदिर (राजस्थान)

हनुमानजी का यह मंदिर राजस्थान के चुरू जिले में है। सालासर गाँव में यह हनुमानजी स्थित है। यह प्रतिमा दाड़ी एवं मुंछो से सुशोभित है। यह मंदिर पर्याप्त बडा है। चारों ओर यात्रियों के ठहरने के लिये धर्मशालायें बनी हुई है। पूरे भारत में श्रद्धालु यहाँ अपनी मनोकामनायें लेकर आते है, और मनचाहा वरदान पाता है। माना जाता है कि हनुमानजी की यह प्रतिमा एक किसान को जमीन जोतते समय यहाँ से मिली थी। जिस प्रतिमा ने सालासर गाँव में

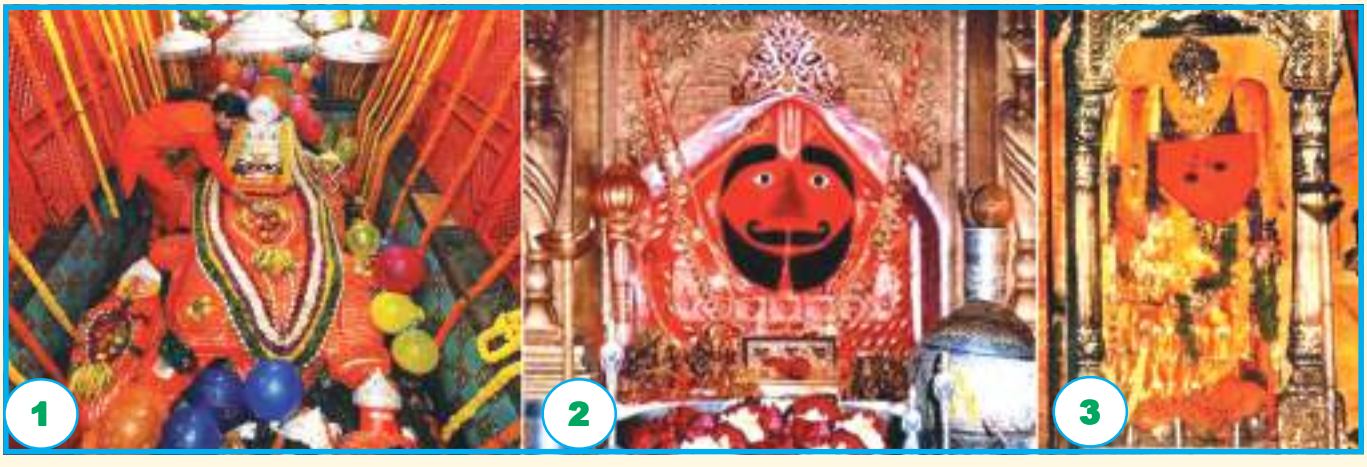

सोने के सिंहासन पर स्थापित किया गया है। यहाँ हर साल भाद्रपद, अश्विन, चैत्र एवं वैशाख की पूर्णिमा के दिन विशाल मेला लगता है।

३. श्री संकट मोचन मंदिर - वाराणसी (उत्तरप्रदेश)

यु.पी. वाराणसी में स्थित ये मंदिर की चारों ओर छोटा सा वन है। यहाँ का वातावरण एकांत शांति एवं उपासकों के लिये दिव्य साधना स्थली योग्य है। मंदिर के प्रांगण में श्री हनुमानजी की दिव्य प्रतिमा स्थापित है और उनके समीप ही भगवान नृसिंह का मंदिर भी है। ऐसी मान्यता है की यह मूर्ति गोस्वामी तुलसीदासजी के तप एवं पुण्य से प्रकट हुई स्वयंभू मूर्ति है।

इस मूर्ति दाये हाथ से भक्तों को अभय प्रदान कर रहे है और बाया हाथ उनके हृदय पर स्थित है। चैत्र पूर्णिमा के दिन जन्मोत्सव मनाया जाता है और चार दिन तक रामायण सम्मेलन महोत्सव एवं संगीत सम्मेलन भी होता है।

४. श्री हनुमान गढी अयोध्या (उत्तरप्रदेश)

अयोध्या भगवान रामजी का जन्म स्थल है। यहाँ का सब से प्रमुख हनुमान मंदिर हनुमान गढी के नाम से प्रसिद्ध है। यह मंदिर राज द्वार के सामने ऊँचे टीले पर स्थित है। इस में ६० सीढिया चढने के बाद हनुमानजी दर्शन देता है। यह मंदिर काफी बडा है, चारों ओर साधु संतों और यात्री का निवास स्थान है। हनुमान गढी के दक्षिण में सुग्रीव टीला व अंगद टीला नामक प्रसिद्ध स्थान है। मानने में आता है कि यह मंदिर लगभग ३०० साल पुराना है।

५. श्रीहनुमान धारा चित्रकूट (उत्तरप्रदेश)

उत्तरप्रदेश के सीतापुर नामक स्थान के समीप यह हनुमानजी स्थित है। सीतापुर से हनुमान धारा की दूरी तीन मील है। यह स्थान पर्वत माला के मध्यभाग में स्थित है।

पहाड के सहारे हनुमानजी की विशाल मूर्ति स्थित है, उसके सीर पर जल के दो कुंड है, जो हमेशा जल से भरे रहते है और उनमें से जल निरंतर बहता रहता है, इस धारा का जल हनुमानजी को स्पर्श करता हुआ बहता है, इसलिये हनुमान धारा कहते है।

धारा का जल पहाड में ही विलीन हो जाता है। इसे लोग प्रभाती नदी या पाताल गंगा कहते है। इस स्थान के बारे में एक पौराणिक कथा प्रचलित है कि श्रीराम के अयोध्या वापस लौटने के बाद राज्याभिषेक हुआ इन के बाद एक दिन हनुमानजी ने भगवान श्रीरामचंद्रजी से कहा है भगवान मुझे कोई ऐसा स्थान बताये, जहाँ लंका दहन से उत्पन्न मेरे शरीर का ताप शांत हो सके। तब प्रभु श्रीराम ने हनुमानजी को यह स्थान बताया।

(क्रमशः)

भागवत कथा सागर

दक्ष के यज्ञ का विध्वंस

तेलुगु मूल - डॉ: वैष्णवांघ्रि सेवक दास
हिन्दी अनुवाद - श्री अमोघ गौरांग दास

इस जगत के सभी अपराधों में से एक वैष्णव के प्रति हुआ अपराध सबसे खतरनाक माना जाता है। वैष्णव अपराध के भयानक परिणाम से बचना असंभव है। लेकिन वैष्णव कौन है? वैष्णव की सरल परिभाषा के अनुसार भगवान विष्णु के आराधक को वैष्णव कहा जाता है। श्रीमद्भागवतम में शिवजी की महिमा का वर्णन सर्वोच्च वैष्णव के रूप में किया गया है। दक्ष द्वारा किये जानेवाले यज्ञ के विध्वंस की इस कथा में शिवजी जैसे महान वैष्णव के प्रति अपराध करने से आनेवाले भयंकर संकट का भली प्रकार वर्णन किया गया है।

इस कथा का आरम्भ शिवजी की पत्नी सती से होता है। सती का जन्म सुप्रसिद्ध प्रजापति दक्ष की पुत्री के रूप में हुआ था। स्वयंभुवमनु की आकूति, देवहूति एवं प्रसूति नामक तीन कन्यायें तथा प्रियव्रता एवं उत्थानपाद नामक दो पुत्र थे। मनु ने प्रसूति का विवाह ब्रह्मा जी के पुत्र दक्ष के साथ किया। प्रसूति एवं दक्ष की संताने संपूर्ण जगत में फैल गईं। उन्हें सोलह सुंदर कन्याएँ प्राप्त हुईं। जिनमें से तेरह का विवाह धर्म के साथ हुआ, एक का विवाह अग्निदेव से, एक का पितृ-देवताओं से तथा अंतिम पुत्री का विवाह सभी अमंगलों का नाश करने वाले शिवजी से हुआ। अंतिम कन्या का नाम सती था।

सती ने अत्यंत गम्भीरता से अपने पति शिवजी की सेवा की। लेकिन उनकी कोई संतान न हुई क्योंकि बहुत कम आयु में ही उन्होंने अपने शरीर को याग की अग्नि में त्याग दिया था। वे दक्ष द्वारा अपने संत स्वभाव के पति देव का अपमान न सह सकीं। निराश होकर उन्होंने अपने शरीर को याग की अग्नि में भस्म कर दिया। यह जानना आवश्यक है कि दक्ष का शिव जी के साथ इतना निकटतम संबंध होने पर भी वे शिव जी से इतना क्यों अप्रसन्न थे और उनके प्रति वैर भाव का कारण क्या था? एक बार स्वर्गलोक में सभी प्रजापतियों ने एक महान यज्ञ का आयोजन किया। अनेक संत पुरुष, योगी एवं देवता अपने मित्रों एवं संबंधियों के साथ उस यज्ञ में सम्मिलित हुए। ब्रह्म देव एवं महादेव भी उस समारोह में उपस्थित थे। जब सभी व्यक्ति अपने स्थान पर बैठे यज्ञ के प्रारम्भ होने की प्रतीक्षा कर रहे थे तब चमकीली कान्ति से युक्त शरीर वाले दक्ष ने वहाँ प्रवेश किया। उस राजसभा में सभी व्यक्ति दक्ष के सम्मान में उठ कर खड़े हो गये। राजसभा के प्रधान ब्रह्म देव ने उनका स्वागत करते हुए उचित स्थान प्रदान किया। दक्ष ने देखा कि उनके सम्मान में सभी व्यक्ति खड़े हो गये लेकिन उनके दामाद शिवजी अपने स्थान से नहीं उठे। उस व्यवहार से दक्ष बहुत क्रोधित हो गये। उन्होंने विवेकहीनता पूर्वक महादेव के लिए यह अपशब्द कहे ''इस व्यक्ति शिव में शिष्टता बिलकुल नहीं है। इसे पता नहीं है कि महान व्यक्तियों की राजसभा में किस प्रकार का आदरण करना चाहिए। इसने एक संत पुरुष होने का अभिनय करके मेरी सुंदर नेत्रों वाली कन्या से विवाह कर लिया। वास्तव में इसकी आँखे एक बंदर की आखों जैसी हैं। मैंने इसको अपनी पुत्री सम्मानपूर्वक नहीं अपितु केवल ब्रह्मा जी के कहने पर दे दी। मैं इन्हें यज्ञों की आहुति में भाग लेने से वंचित रहने का शाप देता हूँ।'' क्रोध के आवेश में इस प्रकार शिवजी को शाप देकर दक्ष तुरंत वहाँ से चले गये।

शिवजी के वाहन नन्दीश्वर ने दक्ष द्वारा अपने स्वामी को शाप दिये जाने पर उत्तेजित होकर प्रत्युत्तर में वहाँ उपस्थित उन सभी व्यक्तियों को शाप दिया जिन्होंने शिवजी के अपमान पर कोई आपत्ति नहीं प्रकट की। नन्दीश्वर ने कहा ''देहात्म बुद्धि वाले इस दक्ष को शीघ्र ही बकरे का सिर प्राप्त हो। ये सभी ब्राह्मण अपने शरीर पालन के लिए विद्या, तप तथा वृत आदि का आश्रय लें। इन्हें भक्ष्याभक्ष्य का विवेक न रह जाये। ये द्वार-द्वार भिक्षा माँगकर अपना जीवन यापन करें।'' नन्दीश्वर के शापों को सुनने के बाद प्रतिक्रिया में भृगुमुनि ने शिवजी के अनुयायियों को शाप देते हुए कहा ''शिव के सभी अनुयायी नास्तिक हो जायें। शिव के सभी उपासक लम्बे केश धारण करें और मदिरा एवं मांस का भक्षण करें।'' उन शापों एवं प्रतिशापों के समय शिवजी शांत थे और फिर वे वहाँ से चले गये। बाद में सभी प्रजापति किसी प्रकार यज्ञ का समापन करके अपने निवास स्थानों पर चले गये।

यद्यपि प्रजापतियों द्वारा आयोजित यज्ञ बहुत पहले समाप्त हो चुका था लेकिन शिवजी एवं दक्ष के मद्य वैमनस्य समाप्त नहीं हुआ। बाद में दक्ष ने एक अन्य बड़े यज्ञ का आयोजन किया जिसमें सभी देवी देवताओं को आमन्त्रित किया लेकिन शिवजी के प्रति वैर भाव होने के कारण उन्हे आमन्त्रित नहीं किया। अपने सिवा अन्य सभी को उस यज्ञ में पिता के घर जाते हुए देखकर सती बहुत व्याकुल हो गईं। उन्होने अपने पति देव से पिता द्वारा आयोजित यज्ञ में जाने की अनुमति माँगी लेकिन शिवजी ने उनके प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया। शिवजी ने कहा कि बिना निमंत्रण अपने पिता के घर भी नहीं जाना चाहिए। लेकिन सती ने आग्रह किया और अपने पिता के घर जाने के लिए तैय्यार हो गई। शिवजी ने सती की सुरक्षा का पर्याप्त ध्यान रखते हुए उनके साथ अपनी संपूर्ण सेना भी भेजी। सती अपने पिता के घर पहुँच गईं लेकिन दक्ष के क्रोध के भय से उनका किसी ने स्वागत नहीं किया। गहरी शत्रुता के कारण दक्ष ने उनकी ओर देखा भी नहीं। किसी ने उनसे कुशलता पूँछने एवं बातचीत करने की शिष्टता भी नहीं दिखाई। उसी बीच सती ने देखा कि यज्ञस्थल में उनके पति शिवजी का कोई यज्ञ भाग नहीं है। इससे उनकी चेतना जागृत हुई और वे अत्यंत क्रोधित हो गई। वे अकारण ही पवित्र शिवजी का अपमान करने वाले दक्ष से प्राप्त हुए शरीर में नहीं रहना चाहती थीं। वे यज्ञस्थल के मध्य में बैठ गईं और अपनी योग शक्ति द्वारा अग्नि प्रज्वलित करके उसमें अपने शरीर को भस्म कर दिया। शिवजी की सेना ने यज्ञ के आयोजकों पर आक्रमण कर दिया किन्तु भृगु मुनि द्वारा निर्मित दिव्य सेना ने उन्हें वहाँ से भगा दिया। अन्त में यह समाचार शिवजी के पास पहुँचा।

शिवजी अत्यंत क्रोधित हो गये और उन्होंने अपने सिर की जटाओं से एक लट नोच कर उसे पृथ्वी पर पटक कर वीरभद्र को उत्पन्न किया। शिवजी के आदेश से वीरभद्र दक्ष की यज्ञशाला में गया और उसे नष्ट करने लगा। उनके

अनुयायी अत्यंत डरावने थे और वे संपूर्ण व्यवस्था का पूर्णतया विध्वंस करने लगे। पल भर में ही सभी यज्ञ कुण्डों की अग्नि बुझ गई, सभी बर्तन टूट गये और मंडप नीचे गिर पड़े। तब वीरभद्र ने भृगुमुनि को पकड़ कर उनकी मूँछ नोच ली। वीरभद्र ने दक्ष द्वारा शिवजी को शाप देते समय अपनी भौंहें मटकाने वाले भृगु मुनि को पकड़ कर उनकी आँखे निकाल लीं। उसने शिवजी के अपमान के समय हँसने वाले पूषा के दाँत बल पूर्वक निकाल लिए। इस प्रकार शिवजी के अपमान के सभी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष भागीदारों को वीरभद्र ने कठोर दण्ड दिया। बाद में उसने दक्ष को पकड़कर धरती पर पटक दिया और उसके सिर को काट कर अलग करने के लिए वक्ष पर चढ़ बैठा। बहुत प्रयत्न करने पर भी दक्ष का सिर नहीं कटा। अंत में वीरभद्र ने पशुओं का वध करने वाली लकड़ी की कुल्हाड़ी से दक्ष का सिर काट दिया। वीरभद्र ने वहाँ से कैलास वापस जाने से पहले दक्ष के सिर को आग में जलाकर समस्त यज्ञशाला में भी आग लगा दी।

बाद में वीरभद्र द्वारा प्रताड़ित सभी देवता एवं ब्राह्मण ब्रह्मा जी के पास गये। और उनके समक्ष स्थिति का वर्णन किया। तब ब्रह्मा जी उन सब को साथ लेकर कैलास पर्वत पर पहुँचे। शिवजी गहरे ध्यान में थे। वे कुश के आसन पर विशेष मुद्रा में बैठे थे। ब्रह्मा जी के अगमन का पता लगने पर शिवजी ने उन्हे विनम्रता पूर्वक आमन्त्रित करके सम्मान प्रदान किया। ब्रह्मा जी ने सभी देवताओं की ओर से शिवजी से दक्ष द्वारा प्रारंभ किये गये यज्ञ को संपूर्ण करने एवं उसमें अपना यज्ञ भाग लेने की प्रार्थना की। उन्होंने शिवजी से वीरभद्र के आक्रमण द्वारा क्षतिग्रस्त सभी व्यक्तियों का जीवन एवं उनकी शक्ति पुनः प्रदान करने की प्रार्थना की।

तब शिवजी ने बताया कि उन्होंने कम बुद्धि वाले व्यक्तियों को कठोर सबक देने के लिए ऐसा किया था। उन्होंने यह भी बताया कि दक्ष का सिर आग में जल जाने के कारण उन्हें बकरे के सिर के साथ ही रहना होगा। उन्होंने सभी के पूर्णतया स्वस्थ होने का आश्वासन दिया। तब ब्रह्मा जी शिवजी के साथ यज्ञस्थल पर पहुँचे। शिवजी के आदेशानुसार बकरे का सिर लाकर दक्ष के मृत शरीर पर लगाया गया और उनके प्राण वापस आ गये। दक्ष को अपना बकरे का सिर देखकर बहुत दुःख हुआ। दक्ष ने अपनी पुत्री के अपमान के लिए घोर पश्चाताप भी व्यक्त किया। उन्होंने शिवजी से अपने सभी अपराधों के लिए क्षमा याचना की। अत्यंत दयालु शिवजी ने उन्हे क्षमा कर दिया। तब ब्राह्मणों ने वैदिक मंत्रों के द्वारा यज्ञशाला को पवित्र करके यज्ञ का समापन किया। यज्ञ की वेदी से भगवान विष्णु प्रकट हुए और अपने दिव्य दर्शनों द्वारा सभी को आशीर्वाद दिया। भगवान विष्णु ने दक्ष को भी आशीर्वाद दिया। बाद में दक्ष ने ब्रह्मा जी एवं शिवजी को उनका यज्ञ भाग दिया। सभी देवताओं ने भी दक्ष को अपनी शुभ कामनाएँ दीं। अपने शरीर को याग की अग्नि में भस्म करने वाली दक्ष की पुत्री सती ने बाद में हिमावन के घर दूसरा जन्म लिया और पार्वती के रूप में वे पुनः शिवजी की पत्नी हो गईं। बकरे के सिर वाले दक्ष ने मरीशा के गर्भ से जन्म लेने के लिए अपना शरीर छोड़ दिया। दक्ष के यज्ञ के विध्वंस की यह कथा बहुत पवित्र है। इसे ध्यानपूर्वक सुनने एवं इसका गायन करने वाले सभी व्यक्ति हर तरह के पापों से मुक्त हो जाते हैं।

(गतांक से)

सियाराम ही उपाय

शरणागति मीमांसा

(पंचम खण्ड)

सियाराम ही उपेय

मूल लेखक
श्री सीतारामाचार्य स्वामीजी, अयोध्या

प्रेषक
दास कमलकिशोर हि तापडिया

८५

श्रीमते रामानुजाय नमः

हे महात्माओं! इस प्रकार कृपासागर परमात्मा ने शास्त्रों द्वारा चेतावनी चेतनों के लिए करा दी है। अब इतनी चेतावनी देने पर भी यदि कोई उटपटांग काम करेगा तो इसमें कृपासागर भगवान कैसे दोषी कहे जायेंगे। भगवान ने कृपा कर सुन्दर हाथ दे रक्खा है और शास्त्रों द्वारा समझा दिया है कि इस हाथ से भगवान की पूजा करना, सुगन्धदार सुन्दर पुष्पों की माला बना कर भगवान को प्रेम पूर्वक धारण कराना, सुन्दर चन्दन रगड़ कर गर्मी के समय भगवान के श्री विग्रह में लगाना। भगवान के अर्चा विग्रह को तेल उबटन केशर आदि से मुलायमपना से मालिश करके समयानुसार शीत उष्ण जल से स्नान कराना, भगवान को सुन्दर तिलक करना समयानुसार श्री वस्त्र पहनाना, श्री मुकुट, श्री कुन्डल, श्री तिलक आदि से श्री विग्रह को सुशोभित कराना, भगवान की सेवास्थल में प्रेम से झाड़ू लगा कर सदा स्वच्छ रखना। भगवान के प्यारे अनन्य महात्माओं की सेवा करना। परमात्मा के तरफ दृढ़ाध्यवसाय कराने वाले सद्गुरुओं के श्रीचरणों की सेवा करना। अपने बड़ों की सेवा करना, भगवत्भागवतों के सामने नम्रतापूर्वक हाथ जोड़ना। अपनी स्त्री के अतिरिक्त दूसरों की बेटी बहनों पर बुरी भावना से कभी हाथ नहीं लगाना। पूज्य वर्गों पर तथा अपने बड़ों के ऊपर कभी हाथ नहीं चलाना। इस हाथ से कभी किसी की चोरी नहीं करना इत्यादि अनेक प्रकार से परमात्मा ने चेतनों के लिए चेतावनी करा दिया है। जिन-जिन कर्मों को इस हाथ से त्यागने का हुक्म दिया है उनको त्यागता हुआ और जिन-जिन कर्मों को करने की आज्ञा दिया है उनको करता हुआ जो कोई रहेगा उसका शास्त्र के अनुसार जरूर कल्याण होगा। अब इन उपदेशों को भूल कर जो अपने बेसमझना से इन हाथों से उटपटांग काम करेगा उसका फल उसे ही भोगना पड़ेगा। हाथ देने के कारण उसमें परमात्मा कभी भी दोषी नहीं गिने जावेंगे क्योंकि हाथ दिये तो शास्त्रों द्वारा भला बुरा का ज्ञान भी कहा दिया है। इतने पर भी यदि परमात्मा को कोई दोष देगा तो उसका क्या बुरा फल होगा उसको परमात्मा ही जानें। इसी प्रकार परमात्मा ने कृपा करके हम चेतनों के लिये जीभ दिया है। जीभ देकर बड़ों के द्वारा शास्त्रानुसार चेतावनी करा दिया है कि इस जिह्वा से परमात्मा का गुणानुवाद कीर्त्तन करना, परमात्मा की स्तुति करना, परमात्मा का नाम लेना, सबसे मधुर वचन बोलना इससे तुम्हारा कल्याण होगा। इस जीभ से किसी की बुराई न करना, किसी का दोष वर्णन नहीं करना, किसी की कभी निन्दा नहीं करना, रुक्ष-भाषण नहीं करना, जो किसी के सुनने में अत्यन्त बुरा मालूम पड़ता हो ऐसा सत्य भी बात होया तो दाब कर रखना कभी किसी को गाली नहीं देना। यदि नहीं मानोगे तो इसका फल बहुत बुरा होगा। इस तरह जीभ देकर भगवान ने भला बुरा का ज्ञान करा दिया है। इस तरह से समझाने पर भी कोई उल्टा चलेगा तो उसका दंड उसे अवश्य भोगना पड़ेगा। जीभ देने के कारण परमात्मा कभी दोषी नहीं गिने जायेंगे। इसी प्रकार परमात्मा ने दया करके कान दिया है और समझा दिया है कि इस कान से हमारा और हमारे प्यारों का गुणानुवाद श्रवण करना इससे कल्याण होगा। इस कान से कभी किसी

की निन्दा और बुराई नहीं सुनना। यदि किसी का दोष सुनागे तो उसका तुम्हें बुरा फल भोगना पड़ेगा। इस प्रकार समझा देने के बाद भी यदि कोई नहीं मानेगा तो उस पाप का भागी वही बनेगा। परमात्मा किसी प्रकार कभी भी दोषी नहीं कहे जायेंगे। हे मुमुक्षु महात्माओं! परमात्मा तो सब इन्द्रियों के साथ इसे देव दुर्लभ मनुष्य देह इसी उद्देश्य से दिये हैं कि यह सत्संग द्वारा भली-बुरी बातों का ज्ञान करके बुरी बातों को छोड़कर अच्छी बातों की तरफ झुकता हुआ श्री पति के शरण होकर इन इन्द्रिय वर्गों द्वारा भजन, श्रवण, कीर्तन करना। श्री भगवान का सेवा का लाभ लेता हुआ अन्त में दिव्य परमपद को चला जाय और आवागमन से रहित होकर सदा के लिये सुखी हो जाय। इस प्रकार इसके कल्याण के उद्देश्य से प्रभु ने इसे देह और इन्द्रियों को प्रदान किया है। अब इस देह इन्द्रिय द्वारा यह यदि अपना कल्याण न करके नरक जाने का काम करे तो इसमें यह चेतन दोषी गिना जायेगा। समझदार लोग परमात्मा को कभी दोषी नहीं मान सकेंगे। जैसे किसी ने अपने पुत्र को एक तलवार दिया और यह समझा दिया कि यदि कोई भी शत्रु तुम्हारे पर कभी आक्रमण करे तो इसी तलवार से उसे मार डालना। यह तलवार तुम्हारी रक्षा के लिये मैं दे रहा हूँ। बाद में वह लड़का अपनी मूर्खता से यदि अपना ही हाथ, शिर, पैर, काट लेवे तो इसमें अपराध कौन हो सकता है। इसमें पिता का अपराध नहीं गिना जायेगा। वह लड़का ही दोषी माना जायेगा जैसे-

क्लेशत्यागकृतेऽर्पितेन करणव्यूहेन देहेन चेत्।
स्वानर्थं वत जन्तु रार्जयति चेन्मन्तु र्नियन्तुःकुतः।।
शस्त्रंशत्रु बधाय नैज्यगुरुणा दत्त य तेनैव चेत्।
पुत्रोहन्ति निजं वपुः कथयरे तत्रापराधी तुकः।।

इसका अर्थ पहले ही कह चुका हूँ। फिर भी संक्षेप में कहता हूँ। ध्यान देकर सुनिए। जन्म मरणादि संसार के भयंकर क्लेशों से छूट जाने के लिए इन्द्रिय वर्गों के साथ देव दुर्लभ मनुष्य का देह कृपा सागर परमात्मा ने दिया है। इस प्रकार परमात्मा की असीम कृपा से दिया हुआ इस देह इन्द्रियों से परमात्मा के भजन, कीर्त्तन, पूजन, स्मरण, सेवा आदि का लाभ न लेकर शास्त्र विरुद्ध आचरण करके अपनी अज्ञानता वश यदि कोई चेतन उल्टा अपना अनर्थ करले तो इसमें परमात्मा का दोष क्या है। जैसे पिता के द्वारा शत्रु वध के लिये दिये हुए अस्त्र-शस्त्र के द्वारा अपनी मूर्खतावश यदि पुत्र अपने शरीर को बुरी हालत से काट कर नाश कर बैठे इसमें उस पुत्र के सिवाय पिता कैसे दोषी हो सकता है। उसी प्रकार इन्द्रिय वर्ग देने के कारण कभी भी परमात्मा दोषी नहीं हो सकते हैं। इससे शास्त्र विरुद्ध आचरणों से सदा बचना चाहिए। शास्त्रों के मना करने पर भी इन्द्रियों के द्वारा यदि कोई पापों में प्रवृत होगा तो उसका दण्ड उसे ही भोगना पड़ेगा। इससे समझदार मुमुक्षुओं को चाहिये कि न विरुद्ध आचरण में लगे, न परमात्मा पर कभी दोषारोपण करे। बड़ों का कहना है कि ''हानि हेतुः कर्म, प्राप्ति हेतुः कृपा'' इसका अर्थ यह भया कि किसी वक्त कभी भी जहाँ कहीं कुछ भी हानि होती है याने दुःख कष्ट तकलीफ होता है उसका मूल कारण हम चेतनों का कर्म ही है याने प्रारब्ध ही है। खुद कभी भी किसी प्रकार भी परमात्मा चेतनों को हानि पहुँचाते ही नहीं यह अटल सिद्धान्त है और जो कुछ सुख होता है सो भगवान के अनुग्रह का ही फल है और आश्रितों को जो भगवत्प्राप्ति होगी वह भगवान की निर्हेतुक कृपा से ही होगी। पहुँचे हुए जगत्प्रसिद्ध चिरकाल तक सत्संग किये हुए उच्च कोटि के मुमुक्षु महात्माओं का शास्त्र सिद्ध यही अटल सिद्धान्त है कि जिसको इसी जन्म के अन्त में अवश्य परमधाम चले जाने की इच्छा हो, उन्हें इस पूर्वोक्त सूत्र का भाव सदा के लिए हृदय में बज्र की लकीर के समान अंकित कर लेना चाहिए। मैं पहिले ही कह चुका हूँ कि यह उपदेश, यह प्रसंग संसार से अत्यन्त घबड़ाये हुए सच्चे मुमुक्षुओं के लिये ही पुनःपुनः कहा जा रहा है। जो लोग तर्क-वितर्क, वाद-विवाद, संशय, भ्रम के स्वभाव वाले हैं उनके लिये नहीं है, न उन लोगों के लिये हमारे पास क्षण मात्र का भी समय है। (क्रमशः)

भगवद्गीता और नौजवान

सफलता की जीवनरेखा

तेलुगु मूल - डॉ.वैष्णवांघ्रि सेवक दास
हिन्दी अनुवाद - श्री अमोघ गौराँग दास

सभी व्यक्ति, विशेषतः विद्यार्थी, जीवन के सभी प्रयत्नों में सफलता प्राप्त करना चाहते हैं। सभी विद्यार्थी परीक्षाओं में अधिकतम अंक प्राप्त करके सहपाठियों के मध्य सम्मान एवं शैक्षणिक सस्थाओं में प्रथम स्थान प्राप्त करने की इच्छा रखते हैं। लेकिन उनमें से बहुत कम लोग ही अपने सभी प्रयत्नों में सफल होते हैं। चंद बिरलों को ही अपनी इच्छानुसार सफलता प्राप्त होती है। इच्छानुसार सफलता प्राप्त करने के लिए क्या करना चाहिए? वाँछित स्तर की सफलता ना प्राप्त कर पाने का कारण क्या है? भगवद्गीता से इन सभी प्रश्नों का स्पष्ट उत्तर प्राप्त होता है। गीता का ज्ञान सफलता की जीवनरेखा पर भली प्रकार प्रकाश डालता है। वाँछित सफलता को प्राप्त करने के बारे में महत्वपूर्ण बात बताते हुए भगवान श्रीकृष्ण ने कहा ''जिस प्रकार पानी में तैरती नाव को प्रचण्ड वायु दूर बहा ले जाती है उसी प्रकार विचरणशील इन्द्रियों में से कोई एक जिस पर मन निरन्तर लगा रहता है, मनुष्य की बुद्धि को हर लेती है।'' (भगवद्गीता २.६७)

सभी के लाभ के लिए भगवान श्रीकृष्ण ने सफलता की जीवनरेखा के बारे में स्पष्ट रूप से उपदेश दिया है। समुद्र की तरंगों के शांत होने पर ही उसमें जहाज भली प्रकार चल सकता है। अशांत तरंगे जहाज को प्रचण्डता से ठेलती हैं। अपने प्रयत्नों में सफलता प्राप्त करने के लिए हमें अपनी इन्द्रियों (अर्थात् शरीर) को विभिन्न कार्यों में लगाना पड़ता है। हाथ, पैर, पेट, प्रजनन अंग एवं गुदा हमारी कर्मेन्द्रियाँ हैं; जब कि आँख, कान, नाक, जिह्वा एवं त्वचा ज्ञानेन्द्रियाँ हैं। इन दस इन्द्रियों से निर्मित हमारा शरीर विभिन्न कार्यों को संपन्न करता है। लेकिन कठिनाई यह है कि इनमें से एक भी इन्द्रिय के इन्द्रियविषय में फँस जाने पर मनुष्य का पतन हो जाता है। तब सफलता के सभी रास्ते बन्द हो जाते है। सामान्यतया जानवरों की कोई एक इन्द्रिय बहुत शक्तिशाली होती है। वास्तव में वह इन्द्रिय उसकी कमजोरी बन जाती है। उदाहरण के लिए हिरण के पास श्रवण करने की असाधारण क्षमता होती है। लेकिन उसे संगीत भी अत्यंत प्रिय होने के कारण शिकारी उसे पहले सुंदर संगीत द्वारा सम्मोहित करता है और उसके संगीत में लीन हो जाने पर उसे मार देता है। पतंगों के प्रकाश से आकर्षित होने के कारण वे भारी संख्या में प्रकाश श्रोत पर ढ़ेर हो जाते हैं। एक मछली का अपने स्वाद पर नियंत्रण न होने के कारण वह केंचुआ खाने के लालच में मछली पकड़ने वाले काँटे में फँस जाती है। इस प्रकार अनेकों पशुओं का नाश उनकी केवल एक असंयमित इन्द्रिय के कारण हो जाता है। तब भला उस मनुष्य का क्या होगा जिसकी सभी इन्द्रियाँ असंयमित

होती हैं? इन्द्रयों के असंयमित होने पर वह स्वयं को पतन से कैसे बचायेगा?

सफलता के इच्छुक विद्यार्थियों को कबड्डी के खेल से प्रेरणा एवं सीख लेनी चाहिए। कबड्डी का खेल तेजी से संपूर्ण विश्व में विख्यात हो रहा है। इस खेल में अंक प्राप्त करने के लिए एक टोली का एक खिलाड़ी विरोधी टोली में किसी को छूने के लिए जाता है। उसे केवल विरोधी टोली के खिलाड़ी को छूना ही नहीं होता है, उसे विरोधी टोली के खिलाड़ियों द्वारा पकड़े जाने से बचकर आना भी होता है। एक खिलाड़ी विरोधी टोली में जिसे छू लेता है उसे ''आउट'' कर दिया जाता है और खिलाड़ी की टोली को अंक प्राप्त हो जाते हैं। जब खिलाड़ी विरोधी पक्ष के क्षेत्र में प्रवेश करता है तो विरोधी पक्ष के छह-सात खिलाड़ी उसे पकड़ने का प्रयत्न करते हैं। वे उसे ''आउट'' घोषित कराने के लिए उस पर कूद पड़ते हैं और बल पूर्वक उसे पकड़ लेते हैं। एक परीक्षा में सफल होने के इच्छुक विद्यार्थी को इसी प्रकार अपनी सभी इन्द्रियों से सतर्क रहना चाहिए। इन्द्रियाँ उसे घेर कर उसकी लक्ष्य को प्राप्त करने की शक्ति क्षीण कर देती हैं। जिस प्रकार कबड्डी का एक निपुण खिलाड़ी विरोधी टोली के सदस्यों द्वारा पकड़ा नहीं जाता है अपितु वह उन्हे ''आउट'' कर देता है, उसी प्रकार सफलता प्राप्त करने के इच्छुक एक विद्यार्थी को इन्द्रियों द्वारा पकड़े जाने से बचने का निश्चय कर लेना चाहिए। उसे एक-एक करके अपनी सभी इन्द्रयों को ''आउट'' करके पूरे अंक प्राप्त करने चाहिए। इन्द्रियों को संयमित करने की ऐसी अद्भुत प्राप्ति से वह सदैव विजय पताका की ओर अग्रसर होगा।

लेकिन अब परिस्थिति कबड्डी के खेल से भी अधिक कठोर है। उस खेल में कई खिलाड़ी मिलकर एक खिलाड़ी को एक ओर खींचते हैं। ऐसी स्थिति में वह खिलाड़ी ''आउट'' हो सकता है लोकिन उसकी मृत्यु नहीं होती है। यदि सभी खिलाड़ी एक खिलाड़ी को अलग-अलग दिशाओं में खींचने लगें तो निश्चित रूप से उसकी मृत्यु हो जायेगी। वर्तमान अवस्था इस असामान्य स्थिति की तरह ही है। जब वह अध्ययन के लिए बैठता है तो मोबाइल फोन उसके कानों को एक ओर खींचता है, वाट्सप के संदेश आँखों को दूसरी ओर खींचते हैं, फास्ट फूड जिह्वा को तीसरी ओर खींचता है, और गर्लफ्रेंड के बारे में विचार उसकी त्वचा को अन्य दिशा में खींचता है। यह वास्तव में बहुत खतरनाक स्थिति है। अतः सफलता प्राप्त करने के इच्छुक सभी विद्यार्थियों को चाहिए कि वे अपने पतन से बचने का आश्वासन पाने के लिए भगवद्गीता के संदेश से शिक्षा प्राप्त करें एवं अनुभवी वरिष्ठ व्यक्तियों से एक-एक करके अपनी इन्द्रियों को संयमित करने के लिए मार्गदर्शन लें। ऐसे सावधान विद्यार्थी के लिए सफलता सुनिश्चित है। अर्थात् भगवद्गीता में निश्चित रूप से बताये इस संदेश के अनुसार इन्द्रियों को संयमित करना ही सफलता की जीवनरेखा है।

तिरुमल तिरुपति घाट रोड में यान करनेवाले यात्रियों के लिए विज्ञापन

नीचे सूचित समयों के बीच वाहनदारों का प्रवेश रद्ध कर दिया गया है।

१. द्विचक्रवाहन - रात ११.०० बजे से प्रातःकाल ४.०० बजे तक।

२. अन्य वाहन (कार और बस) - अर्धरात्रि १२.०० बजे से प्रातःकाल ३.०० बजे तक।

३. कुछ अनिवार्य कारणों के कारण उपर्युक्त समयों में परिवर्तन होने की संभावना है।

सूचना - तिरुमल-तिरुपति घाट रोड से यात्रा करनेवाली मोटर घाडीवालें अपना वाहनों से संबंधित 'बार कोड रसीद' को स्कॉनिंग करना अनिवार्य है।

श्री पद्मावती श्रीनिवास का परिणयोत्सव वैभव

तेलुगु मूल - श्रीमती एम.पद्मावती वेंकटरमण

हिन्दी अनुवाद - श्री पी.वी.लक्ष्मीनारायण

तिरुमल में श्री पद्मावती-श्रीनिवासों के परिणय-उत्सव के शुभ संदर्भ पर...

संसार भर में प्रसिद्ध तिरुमल क्षेत्र ''नित्य कल्याण-हरा तोरण'' बन कर विलसता होता है। यहाँ तो स्वामी का हर रोज कल्याण है। हर रोज वैभोग ही वैभोग है। वह कल्याण देखनेवालों के लिए बहुत ही आनंदमय, आह्लादकर, नयनोत्सव बनकर रहता है। इसी दिशा में स्वामीजी का कल्याणोत्सव, परिणयोत्सवों को मनाने के महदाशय से असंख्य भक्तलोग तड़पते रहते हैं। उन भक्त-लोगों का प्रगाढ़ विश्वास है कि श्री स्वामीजी के ऐसे मंगलमय उत्सव मनाये जाने से, अपने-अपने जीवन भी मंगलमय एवं शुभदायी बन कर रहेंगे। श्री स्वामीजी के कल्याणोत्सवों की इतनी प्रशस्ति के कारण वे चलते-चलते ग्राम, मंडल, शहर, बस्ती, राज्य और देश व्याप्त मनाये जाने के बावजूद संसार भर में भी विस्तरित होकर मनाये जाने लगे हैं। आइये हम श्रीस्वामीजी के उन परिणयों के वैभव को जान लें, जो आज इतनी-सी प्रशस्ति पाये हुए हैं।

पद्मावती-श्रीनिवासों के परिणयोत्सव की गाथा

मातृश्री तरिगोंडा वेंगमांबा के द्वारा विरचित ''श्रीवेंकटाचल का माहात्म्य'' नामक अपूर्व ग्रंथ यह बताता है कि कलियुग के वैकुंठ के प्रभु के नाम से संसार-भर में प्रख्यात तथा सप्ताचल के निवासी श्री श्रीनिवास महाप्रभुजी की लीला-विभूति लोक में हृदयारविंद, रसास्वादन मानस बना कर, अनुगृहीत बनाने के महदाशय के साथ श्री पद्मावती अम्मवारु के साथ परिणयोत्सव मनाया था।

एक दिन राजा आकाश, जो अपुत्रक था, पुत्रेष्टि करने के आशय से अरुणानदी के किनारे की जमीन पर हल जोतने लगा, तो जमीन में एक पूर्ण-विकसित कमल का फूल मिला, जिसमें एक सुन्दर-सा नवजात कन्या शिशु लेटा हुआ था। बस अब क्या था कि निस्संतान राजा आकाश शिशु के मिलने पर महदानंद से फूले न समाया। राजा ने उस कन्या-शिशु को

दैवदत्त माना और उसे दैवांश से संभूत माना। राजा ने उस कन्या को साक्षात् लक्ष्मीदेवी मानी। पद्म के कुसुम में पली थी, अतएव, उसका ''पद्मावती'' नाम करण किया था।

एक दिन राजकुमारी पद्मावती अपनी सखियों के संग उद्यान में विचर रही थी, जहाँ श्रीनिवास महाप्रभु घोड़े पर सवार, अपनी मृगया के सिलसिले में एक हिरन को ढूँढते हुए आ पहुँचा। उन विचरती अल्हड़ बालिकाओं से स्वामी ने नादानी से प्रश्न किया कि उन्होंने अपने शिकार को यहाँ से गुजरते तो देखा था... तब उन कन्यामणियों ने स्वामी को अटकाते हुए कहा कि राजकुमारी के विचरने के इस पुष्पोद्यान में पराये पुरुषों का प्रवेश सख्त निषिद्ध है, जिसके उल्लंघन के अपराध में कड़ी सी कड़ी सजा दी जा सकती है। उन कन्याओं की इसे रोक-टोक के प्रहसन पर श्रीनिवासमहाप्रभु हँस पड़े और पद्मावती की तरफ-जबरन आकृष्ट हो जाते हुए उन परिचारिकाओं से पूछा कि यह सुंदर बालिका है कौन?! श्रीनिवास के इस प्रश्न से कन्या पद्मावती ने जरा-से कन्यागर्व से कहा कि वह पहले अपना परिचय दे दे। तब उन युग-युगांतर दम्पतियों के बीच का संभाषण कुछ इस प्रकार चला था...

स्वामी - अपना यदुवंश है। पिता वसुदेव और माता देवकीदेवी है। मित्र फल्गुन है। बन्धुजन पांडव हैं। मेरा तो कृष्ण पक्ष में जनन हुआ था। अतः मेरा कृष्ण नाम है। मेरा कृष्णवर्ण है। यह मेरा कुल-गोत्रादिक है। ऐ भामा! अब तू अपना कुल-समाचार बता।

पद्मावती - ऐ शिकारी! मैं राजा आकाश की पुत्री हूँ। मेरा नाम पद्मावती है। अपना चन्द्रवंश है और अत्रि गोत्रजा हूँ। तुम यहाँ से झट भाग जाओ, वरना पीटे जाओगे। मेरे अपने समाचार पाये, न? अब भाग निकलो।

स्वामी - इतनी रुखाई क्यों? क्यों कठिन बोलती हो? थोडा हँसते बोलो न! अच्छे वाक्योपचारण से पुण्य मिलता है। मीठे बचन तें सुख उपजत चहुँ ओर! मैं पहली नजर से ही तुमसे प्यार करने लगा हूँ। मुझसे शादी करो, तो तुम्हें वैकुंठ दिखला दूँगा। मेरी कांक्षा की पूर्ति करो, भामा।

पद्मावती - ऐ शिकारी! सुन! क्या तुम्हें अपने प्राणों पर आश नहीं? मेरे परम पूज्य पिता आकाशराजा तुम्हें जान से भी मार सकता है। मैं तुम्हारी भलाई में कहती हूँ- तुम फौरन् यहाँ से दफा हो जाओ, तो अच्छा।

स्वामी - तेरे राजा-पिता मुझे कैसे मार सकेगा? तू तो कन्या है और मैं तेरा योग्य वर हूँ। राज-दृष्टि में यह न्याय ही तो है।

पद्मावती - तुम्हें साफ-साफ मालूम नहीं है कि मैं कौन हूँ? तुम्हें देखते ही राजा आकाश तुम्हें कड़ी से कड़ी सजा दे देगा। यही होगा।

स्वामी - हे देवी! मैं तेरे लिए मरने के लिए तैयार हूँ, मगर मेरा मरण साध्य नहीं है। तुमसे मेरा यह लगाव गतजनम के कर्म का फल है, जिसे हम दोनों को भोगने के लिए एक होना ही पड़ेगा। राजा आकाश मुझे कैसे मार सकेगा, जो लिए धर्मात्मा है।

पद्मावती - ऐ निषाद! अब तुम्हें साक्षात् वह परमात्मा ही बचा सकेगा। तुम अपना घर चलो-आराम से। माता-पितरों, बंधुजनों, सहोदरों, मित्रों को विहाय, काहे को तुम इस तरफ एकल भटकने लगे हो।

स्वामी - यह सब ब्रह्म का लेखन है, जो कतई व्यर्थ नहीं होगा। जय-अपजयों की बात छोड़। कुछ भी हो, मैं तुम्हें पाकर ही रहूँगा। तुम्हें सुख पहुँचाना ही मेरा प्रथम कर्तव्य है। चल, हम ब्याह करते हैं।

श्रीनिवास की जिद ने पद्मावती को काफी सताया था, अतः उसने अपनी सखियों को उकसा कर स्वामीजी के घोड़े पर पथराव कराया था। इस नाराजगी पर घबरा कर श्रीनिवास भगवान वहाँ से तुरंत भाग निकला।

ऐसे पद्मावती-श्रीनिवासों का प्रणय-परिचय कोप-तापों से आरंभ हो कर, श्रीनिवास महाप्रभु की दत्तक माता वकुलमालिका के दौत्य की सहायता तथा ज्योतिषिणी के रूप में स्वयं अपने संदेश से प्रणय का बीज बोया जा कर, प्रेम का नांदी प्रस्ताव का अंकुर उग कर, उसने परिणय का रास्ता साफ किया था।

इस महा परिणय के उपलक्ष में समस्त देवेंद्रादि दिक्पाल-समेत ब्रह्मादि देवताओं ने आगमन किया था। यह सब तो

श्रीस्वामी का वेंकटाचल पर पधारने के लिए कलित-कल्पित घटना-मात्र था। मगर, इस कलियुग के महापरिणय में प्रधान सूत्रधारी श्रीस्वामीजी के द्वारा स्वयं धारण किया हुआ। ''ज्योतिषिणी'' का पात्र-निर्वहण अत्यंत सराहनीय व स्तुति पात्र है। उस ''ज्योतिषिणी'' के पात्र निर्वहण में अनगिनत धर्म-सूक्ष्म छिपे हुए दर्शन देते हैं। उन धर्म-सूक्ष्मों को जानने पर ही कलियुग प्रारंभ के उस महापरिणयोत्सव का अर्थ और परमार्थ ज्ञात हो सकते हैं।

ज्योतिषिणी-पात्र में श्रीनिवास

भगवान स्वयं क्या? ऐसे ज्योतिषिणी के रूप में भेष बदल कर जाना क्या? महान लोग ऐसे भेष-बदलू का काम करना अपने लिए अपमान जनक समझेंगे। मगर, कार्य-साधना के लिए ऐसे काम करने में दोष-हीनता पर श्री स्वामी इस तरह के पात्र-निर्वहण के द्वारा सूचित किया करते हैं। हालाँकि एक पूर्ण पुरुष के लिए ऐसे कार्यनिर्वहण में किसी तरह का भेद-भाव व अपमान नहीं होगा।

सर्वोपरि, पद्मावती कई जनमों से हरि से संयोग के लिए तप करती आ रही है। पद्मावती दरअसल साक्षात् लक्ष्मीजी की छाया थी। आज वह अपने प्रीतम के अति निकट आ पायी है। श्रीमन्महाविष्णु से लक्ष्मीजी भी बिछुडी हुई है। श्रीमन्महाविष्णु अपनी वक्षो-विहारिणी की तलाश में तपस्या कर, उसे अपने मन में स्थायी रूप में स्थापित कर, श्रीनिवास बन कर आया हुआ है। आखिर, राजा आकाश के परिवार को किसी को यह बताने की आवश्यकता बन पड़ी है कि यह तपोनिष्ठ श्रीनिवास कोई साधारण मानव नहीं, बल्कि परमपद के यजमानी महाविष्णु है।

श्रीनिवास का इतिहास या वृत्तान्त एक दैव-रहस्य की बात है। इस दैव रहस्य का, और कोई नहीं हो करके, स्वयं परमात्मा ने ही, राजा आकाश को अवगत कराया था, ज्योतिषिणी (भविष्य-वाचिका) के भेष में।

ज्योतिषिणी - पात्र का वर्णन

कार्यार्थ-सिद्धि के लिए राजा आकाश के अंत:पुर में गये ज्योतिषिणी रूपी परमात्मा का भविष्योत्तर पुराण में इस विध का वर्णन किया गया है। बूढ़ी ज्योतिषिणी ने फटी हुई साड़ी पहनी हुई थी और उसने घुँधची या गुंजा की माला पहनी हुई थी। समस्त ब्रह्मांड को ही बंसी की टोकरी बना कर ज्योतिषिणी अपने सिर धरी हुई थी। ब्रह्मदेव को शिशु बना कर अपना आँचल में बँधा था और रुद्र को अपने हाथ की बेंत बना कर नारायणवरम की गलियों में चलने लगी। भगवान सारे ब्रह्मांड को अपने इच्छानुसार बदल लेता है। शिशु चाहने पर शिशु बनना चाहिए। बेंत चाहे तो बेंत बन जाना चाहिए। ब्रह्म-रुद्रों को इस विध बना कर ले जाने में, परमात्मा की सर्वोच्च बल-शक्ति का ज्ञान मिल जाता है। शिशु ब्रह्मदेव का अवतार नहीं। भूलोक में ब्रह्मदेव का अवतार नहीं। उस संदर्भ के अनुसार थोड़े समय के लिए, भगवान की आज्ञा के पालन में शिशु रूप में बदल गया था, बस।

ज्योतिषिणी की सत्य-निष्ठा

ज्योतिषिणी नारायणवरम की गलियों में घूमती हुई ज्योतिष बताऊँगी। ज्योतिष! जो हो, सो बनाऊँगी। जो नहीं हो, तो सो भी बताऊँगी। आपकी भविष्य-वाणी बताऊँगी। जिनको जो चाहिए, सो ही मैं बताऊँगी। जोर से चिल्लाती हुई जाती थी। ऐसे गलियों में चिल्लाती जाती हुई ज्योतिषिणी-रूपी परंधाम को रानी धरणीदेवी के अंत:पुर की परिचारिकाओं ने देखा और जाकर रानीजी को सूचना दे दी, तो रानीजी ने सदर ज्योतिषिणी को अंत:पुर में लिवा लाने का आदेश दिया था। परिचारिकाओं के बुलाने से पहले ज्योतिषिणी ने अंत:पुर में जाने को मुकरने लगी। फिर कहा क्या मेरी खिल्ली उड़ाने के लिए मुझे राजांत:पुर में बुला रही हो? क्या राजा लोग हम जैसे ज्योतिषों की इज्ज़त करेंगे? इस प्रकार नानाविध प्रश्न कर, आखिरकार, रानी के दर्शनार्थ निकली।

उस ज्योतिषिणी ने पहले रानी धरणीदेवी को स्नान कर साफ बनकर आने को कहा। यद्यपि आप स्वयं सर्वोत्तम तथा सर्वव्यापी होने परभी, अपनी भविष्यवाणी प्रारंभ करने से पहले, संप्रदायानुसार देवता-स्मरण किया। लोक रक्षणार्थ, सकल तीर्थ, सकल क्षेत्रादियों की महिमा का स्मरण कर, अपनी भविष्यवाणी शुरू की। ब्रह्मादि देवताओं का स्मरण कर, आसेतुहिमाचल में

हुए पुण्यक्षेत्र अथवा नदी-नदों को याद कर अपनी टोकरी पर, बगल के शिशु पर कसम खाकर सत्य ही प्रवाचित करने का वादा किया था।

ऐसा क्यों किया गया था? ऐसा क्यों करना पड़ा? पांडिती हो सकती है। प्रतिभा रह सकती है। मगर, भगवदनुग्रह अपने ऊपर न रहने से वे सब वृथा ही है। इस बात पर जोर देने के आशय में ज्योतिषिणी ने अपनी वाक्सुद्धि भविष्यवाणी में आजमायी। उसे सत्य बोलना चाहिए। भविष्यवाणी कहनी चाहिए। इस बात के लिए भगवान के अनुग्रह का होना अत्यंत आवश्यक है। तभी तो कही हुई भविष्यवाणी सत्य-संपन्न बन सकने की उम्मीद है। वास्तव में उस भगवान के रक्षा-कवच के होने पर ही सब कुछ संपन्न होता है। जिसकी सिद्धि चाहेंगे, उसकी बुद्धि होकर रहेगी। विद्या की सिद्धि होयेगी। जितनी भी पांडिती हो, जितना भी शास्त्र-विज्ञान क्यों न हो, उस भगवदानुग्रह के अभाव में मुँह से निकली हुई बात सत्य न बन सकेगी। उस ज्योतिषिणी के रूप में साक्षात् श्री वेंकटेश्वर भी होने पर, सब देवी-देवताओं के साथ श्री वेंकटेश्वर का भी स्मरण उसने किया था। इस प्रकार ज्योतिषिणी ने जो भी शुरू किया था, वह सब भक्तों को स्पष्ट करने अथवा निरूपित करने के आशय से उसने ऐसा किया था। भगवान ने ऐसा बर्त्ताव किया था। इतनी सत्य-संपदा को अपने विवाह व कल्याण के लिए निरूपित किया था, तभी तो पद्मावती-श्रीनिवासों के परिणयोत्सव में इतनी सारी रोचकता व मधुरता अथवा निपुणता की प्रशस्ति हुई थी, जो सत्य, नित्य और वैभव गरिमा प्राप्त हो सकी थी। यह निरामय वास्तविक संपन्नता बन पडी है।

तिरुमल में संपन्न होने वाला पद्मावती-श्रीनिवासों का परिणयोत्सव

पद्मावती श्रीनिवासों के परिणय कार्य के प्रतीक में अखिलांडकोटि के ब्रह्मांडनायक, आद्यंत रहित, अनादि निधन श्रीनिवास की, श्रीदेवी-भूदेवी नायकियों के साथ-वैशाख शुद्ध नवमी के दोनों तरफ से मिले तीन दिन वैभव के साथ नारायण-उद्यान में अधिकार, अनधिकार, भक्तजनों के समक्ष में यह परिणय-सेवा अत्यंत महनीय ढंग से निर्वहित की जाती है। वह तिरुमलगिरि का सायं समय है। भक्तजन-संदोह, कल्याण के मुखिये अग्रभाग पर, अधिकारवर्ग एक तरफ, ढक्का-डमरुक आदि वाद्यविशेष श्राव्य ध्वनि के साथ भक्तजन के संदोह के देखते हुए श्रीवारु गजवाहन पर, छत्र-चामरों-समेत, ध्वज-पताकादि राजोपचारों के साथ वाहनमंटप से महद्वार गोपुर के यहाँ पहुँच कर, वहाँ आलय के प्राकार के प्रांगण से पालकी में आकर श्री-भूदेवेरियों को आँख के कोनों से देखकर, उन्हें पहले धीरे-धीरे नूतन वर की नाई इठलाते बलखाते हुए चलते हुए नारायणगिरि उद्यान में प्रवेश करता है। उसी विध दूसरे दिन अश्ववाहन पर, तीसरे दिन गरुड़वाहन पर श्रीवारु आ पहुँचते हैं।

परिणयोत्सव क्रम की क्रिया-विधि

आमने-सामने आसीन हुए श्रीदेवी-मलयप्पाओं को अर्चक तीन पर्याय पहले पहल पुष्पमाला-समर्पण करते हैं। यह वराह-पुराण में उक्त कथा है। श्रीवारु कुंदमाला अपने कंठ से निकाल कर पद्मावती देवी की कंठ सीमा में अलंकृत करते हैं। उसी माला को निकाल कर पद्मावती श्रीवारि को समर्पित करती है। इस प्रकार तीन बार किया जाता है। इसी क्रिया क्रम का प्रतीक ही यहाँ पुष्पमाला का समर्पण करना है। तदुपरि वेद के मंत्रोच्चारणों के मध्य नूतन वधू-वरों को मधुपर्क (श्रीस्वामी-दम्पतियों को समर्पित किये जाने वाले दही में मिलायित घी, शहद, शुद्ध जल आदियों का मिश्रण) का समर्पण किया जाता है। तदुपरि वेद-मंत्रों के उच्चारण के बीच पद्मावती देवी के विवाह-महोत्सव की श्रुंखला की समाप्ति हो जाती है।

श्री-भूदेवी दोनों इठलाते हुए श्रीनिवास के यहाँ पहुँचकर अर्घ्य, पाद्य, आचमन, धूप, दीप, नैवेद्य आदि उपचारों का ग्रहण कर आचार्यों के द्वारा ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्वणवेदों का श्राव्य पठन कर आपात मधुर संगीत, भरत-नाट्यादि उपवेदों को अवलोकित कर, भक्तजनों को अनुगृहीत कर-यथाविधि प्रदक्षिण करते हुए मंदिर में प्रवेश कर जाते हैं।

इस परिणय के उत्सव का फल कोटि कन्यादान के फल का समान है। उसे मनाने वालों को वेंकटेश के अनुग्रह की प्राप्ति होयेगी। भक्तों के लिए कामधेनु बनकर विलसित हो कर सर्वसौभाग्यों की सिद्धि करता है। अस्तु।

श्री अलघु मल्लारि कृष्णस्वामी मंदिर-मन्नार पोलूर

तेलुगु मूल - श्रीगती एम.उत्तरफल्गुनी
हिन्दी अनुवाद - डॉ.बी.के.माधवी

ऐतिहासिक रूप से प्रसिद्ध मणिमंटप क्षेत्र के रूप में पुकारनेवाले (प्रख्यात) श्री सत्य जांबवती समेत श्री अलघु मल्लारि कृष्णस्वामी का मंदिर मन्नार पोलूर में कालंगी नदी तट के समीप सूल्लूरपेट से करीब चार किलोमीटर दूर पर स्थित है।

ऐतिहासिक निदर्शनों के द्वारा विदित होता है कि इस मंदिर का निर्माण दसवीं शताब्दी में चोलराजाओं के द्वारा हुआ है। तेरहवीं शताब्दी में नेल्लूर का परिपालन किये गए मनुमसिद्धि राजाओं के जमाने में अत्यंत वैभव के साथ रहा है। इसके बाद अठरहवीं शताब्दी में वेंकटगिरि राजाओं के पर्यवेक्षण में इस मंदिर के राजा ने ५ गाँवों के विशाल के रूप में दिये हैं। साल में दो बार ब्रह्मोत्सवों से विराजित क्षेत्र है।

स्थलपुराण - राजा सत्राजित सूर्य भगवान के लिए घोर तप किया था। उनके तप से प्रसन्न होकर सूर्य भगवान ने सत्राजित को 'श्यमंतकमणि' नामक आभरण को बहुमान के रूप में दिये है। वह आभरण हर रोज आठ बारुओं के सोने को देने वाले शक्तिवान आभरण है। एक दिन सत्राजित ने उस मणि धारण करके श्रीकृष्ण के आस्थान में गये। उस मणि के महानता को जानकर श्रीकृष्ण ने लोगों को उपयोग और उनके संक्षेम के लिए उस मणि को देने के लिए कहा। लेकिन सत्राजित ने नहीं माना। सत्राजित ने सोचा की श्रीकृष्ण के पूछने से मणि नहीं देने पर आग्रह से श्रीकृष्ण उसे ले जाने (अपहरण करने) के संदेह से उन्होंने उसे अपने भाई प्रसेन के गले में डालकर सुरक्षित किया। एक दिन प्रसेन उस मणि पहनकर आखेट के लिए गया था। तब एक सिंह उसे मार कर प्रकाशित रूप से रहे उस श्यमंतकमणि को ले लिया। जांबवंत ने उस सिंह का संहार करके श्यमंतकमणि को ले जाकर उसकी बेटी जांबवती को दे दिया।

आखेट के लिए गये प्रसेन वापस नहीं आने से सत्राजित ने सोचा कि- ''श्रीकृष्ण ने ही श्यमंतकमणि के लिए अपने भाई को मारा है'' और श्रीकृष्ण को हंतक, चोर जैसे अपवाद डाल कर निंदा की है - इस प्रकार अपने ऊपर आये निंदा को दूर करने के लिए

श्रीकृष्ण ने गणेश चतुर्थि के दिन गणेश की प्रार्थना करके श्यमंतकमणि की जाँच की शुरुआत की। इस जाँच की पडताल में श्रीकृष्ण ने प्रसेन का मृतदेह, सिंह का मृतदेह देखकर, आधारों के साथ जांबवंत की गुफा में गया। वहाँ जांबवंत की बेटी जांबवति के गले में रहे मणि को देखा।

श्रीकृष्ण को देखकर यदि मणि चाहे तो उससे मल्लयुद्ध करके जीतने के लिए कहा। इसमें जांबवान हार गया। त्रेतायुग में श्रीराम पट्टाभिषेक के बाद जांबवान ने श्रीराम से मल्लयुद्ध करने की अपनी इच्छा को प्रकट किया। श्रीरामचंद्र ने जांबवान की इच्छा द्वापर युग में पूरा होने की बात कहा। इसलिए जांबवान द्वापर युग में श्रीकृष्ण को नहीं पहचानकर, श्रीकृष्ण से मल्लयुद्ध किया। मल्लयुद्ध प्रवीण जांबवान केवल श्रीराम के हाथों में ही हार सकता है। अब श्रीकृष्ण के हाथों में हारने के बाद जांबवान को त्रेतायुग में कहे श्रीराम की बात याद आयी। तुरंत उन्होंने श्रीकृष्ण के अवतार में रहे श्रीराम को पहचान कर शरण की प्रार्थना करते हुए श्यमंतकमणि के साथ अपनी बेटी जांबवति का विवाह श्रीकृष्ण के साथ करवाया।

श्रीकृष्ण ने श्यमंतकमणि को सत्राजित को दे दिया। तब सत्राजित ने इस विषय के बारे में जानकर पश्चात्ताप व्यक्त करते हुए अपनी पुत्री सत्यभामा को पत्नी के रूप में स्वीकार करने की प्रार्थना की। तब श्रीकृष्ण ने सत्यभामा से विवाह कर लिया। इसीलिए मूलविग्रह श्रीकृष्ण के साथ जांबवती-सत्यभामाओं के विग्रह भी रहना यहाँ की विशेषता है।

जांबवंत ने श्रीकृष्ण को श्यमंतकमणि इसी जगह समर्पित किया था। इसलिए इस जगह मणिमंटप क्षेत्र के रूप में पुराण प्रसिद्धि पायी है। प्रधान देवता श्रीकृष्ण के साथ जांबवती-सत्यभामाओं की पूजा का निर्वहण यही हम देख सकते हैं। और कहीं भी इस प्रकार पूजित नहीं किया करते।

यहाँ का प्रधान देवता अलघु मल्लारि कृष्णस्वामी है। जांबवान के साथ मल्लयुद्ध करने के कारण इस स्वामी को मल्लारि कृष्णस्वामी कहते हैं। अत्यंत सुंदर, मनोहर, वेणुगान, चतुर्भुजाओं से त्रिभंगि रूप से रहने के कारण अलघु मल्लारि कृष्णस्वामी के नाम से प्रख्यात हुआ। इस पुण्यक्षेत्र में ही श्रीहरि ने जांबवान से मल्लयुद्ध किया था। इसलिए इस प्रांत को ''मल्लहरि पोरु ऊरु'' नाम पडा है। कालक्रमेणा यह गाँव मल्लारि पोरुरु के रूप में बदलकर अब ''मन्नार पोलूर'' के रूप में व्यवहार में था।

मंदिर, मंदिर के मूर्तियों की शिल्पकलारीति

मंदिर के प्रधानदेवता श्रीकृष्ण के सामने ९ १/२ कदम ऊँचाई से गरुत्मंत का विग्रह अष्टनागाभरणों से युक्त आँखों से आँसू बहाने के जैसे और गर्वभंग हुआ दिखाई पडता है। प्रधान देवता श्रीकृष्ण की प्रतिमा की ऊँचाई ५ १/२ कदम ही है। वाहन रूपधारी गरुत्मंत का विग्रह वैष्णव मंदिरों में प्रधान देवता विग्रह से कम ऊँचाई ही रहता है। लेकिन यहाँ पाताल से ऊपर आकर विश्वरूपदर्शन देने के जैसे दिखाई पडता है। ऐसा कही भी नहीं है। यह यहाँ की विचित्रता है। इसका स्थलपुराण भी है।

जांबवंत से मल्लयुद्ध के बाद श्रीकृष्ण ने जांबवान को श्री कोदंडरामस्वामी के रूप में दर्शन देना चाहा। तब श्रीकृष्ण ने गरुत्मंत को हिमालय के यहाँ तप करने वाले हनुमान को साथ ले आने का आदेश दिया। तब गरुत्मंत ने श्रीकृष्ण की आज्ञा का पालन करते हुए हिमालयों में तप करते हुए हनुमान का दर्शन करके श्रीकृष्ण की आज्ञा के बारे में बताकर हनुमान को मणिमंटप क्षेत्र में आने का निमंत्रण किया। लेकिन हनुमान ने इस आज्ञा का तिरस्कार किया। तब दोनों झगडे करते हुए हनुमान ने अपने विश्वरूप दिखाकर गरुत्मंत का गर्वभंग किया। उस गर्वभंग के बारे में श्रीकृष्ण से विनती करने के जैसे गरुत्मंत का विग्रह रहना यहाँ की विशेषता है। मूलविराट श्रीकृष्णस्वामी की प्रतिमा के सामने मुकुलितहाथों से विषाद चेहरे से आँसू बहाते हुए उसको मिले पराभव के बारे में स्वामी से निवेदन करने के जैसे भंगिमा में खडा हुआ ९ १/२ कदमों का गरुत्मंत विग्रह देखने वालों का मन आकर्षित करता है। इस विग्रह के आँखों से आँसू बहाने का दृश्य आज भी देख सकते है। उसी प्रकार सत्यभामा देवी का भी गर्वभंग हुआ है।

गर्वभंग हुए गरुत्मंत को श्रीकृष्ण ने वापस हनुमान के पास हिमालय भेजा कि सीताराम सहित श्रीराम ने हनुमान को बुला रहे हैं। इस आह्वान पाकर हनुमान ने बहुत खुशी के साथ मणिमंटप क्षेत्र के यहाँ आया। तब सत्यभामा देवी को सीतादेवी के रूप में साक्षात्कार होने के लिए आदेश दिया। इस आज्ञा का पालन करने में सत्यभामा विफल हुई है। हनुमान ने भी सत्यभामा को सीतादेवी के रूप में स्वीकार नहीं किया। तब श्रीकृष्ण ने रुक्मिणी को सीतादेवी के रूप में दर्शन देने के लिए कहा। तुरंत वह भक्ति-श्रद्धाओं के साथ तीन बार श्रीकृष्ण की ओर प्रदक्षिण करने पर वह सीतादेवी के रूप में साक्षात्कार हुई। तब हनुमान ने सीता सहित श्री कोदंदराम का साक्षात्कार पाकर वापस हिमालय की ओर उन्मुख हुए।

प्रधान देवालय के दाये ओर महालक्ष्मी स्वरूप रुक्मिणी देवी का मंदिर है। इस मंदिर रुक्मिणीदेवी की भक्ति-श्रद्धाओं का एक निदर्शन के रूप में प्रसिद्धि हुआ है। इस गौरव को सत्यभामा देवी नहीं पायी। इस मंदिर में रुक्मिणी देवी ने सीतादेवी के रूप में

साक्षात्कार होने के कारण श्री सौंदर्यवल्ली के नाम से जानी जाती है। प्रधान मंदिर के पीछे एक गंभीर, ९ १/२ कदमों के जांबवंत के विग्रह से एक मंदिर का निर्माण हुआ है। ऐसा विश्वप्रसिद्धि और कही नहीं दिखाई देता। इस पुण्यक्षेत्र का क्षेत्रपालक जांबवंत है।

प्रधान देवालय के बाये और श्री सीता राम लक्ष्मण सहित श्री कोदंडरामस्वामी को अलग से ध्वजखंभ (ध्वजस्तंभ) के साथ एक मंदिर का निर्माण हुआ है। यह श्रीकृष्ण जांबवंत को श्री सीता समेत कोदंडरामस्वामी के रूप में दर्शन दिया है इसका निदर्शन है। एक ही देवालय के प्रांगण में श्रीकृष्ण, श्रीराम मंदिर अलग-अलग ध्वजस्तंभों के साथ रहना और कहीं नहीं दिखाई देगा। यह मंदिर श्रीकृष्ण, श्रीरामावतार संगम का एक निदर्शन है।

मूलविराट द्वारपालों के साथ, सुग्रीव जटायु के विग्रह रहने के कारण यह पुण्यक्षेत्र जगत् प्रसिद्धि पायी है।

इस मंदिर में श्री आंडाल, श्री हनुमान, श्री वेंकटेश्वरस्वामी, श्री रामानुजस्वामी और बारह आल्वारों से अलग-अलग सन्निधियाँ रहने से इस मंदिर महान वैष्णव क्षेत्र के रूप में पहचाना गया है।

इस मंदिर के विमानशिखर तिरुपति श्री वेंकटेश्वरस्वामी मंदिर के शिखर के जैसे हैं। श्रीवैष्णव देवालय विमान शिखर में साधारण रूप से गरुड चित्र रहते हैं। लेकिन यहाँ तिरुपति श्री वेंकटेश्वरस्वामी मंदिर के जैसे सिंह के चित्र रहना और एक विशेष है।

इतिहास के द्वारा विदित होता है कि- मनुमसिद्धि के समय में इस मंदिर में अत्यंत वैभव देखा है। १६वीं शताब्दी से संबंधित वेंकटनरसिंह कवि श्री मन्नारि कृष्णशतक, श्रीरामचंद्र शतक नामक दो शतक लिखकर श्रीकृष्ण को अंकित किया है।

उसी प्रकार अय्यलरायल नारायण कवि ने अपने हंसविंशति नामक काव्य में ४वी अध्याय में इस मंदिर के प्रधान देवता मल्लारि कृष्णस्वामी को गोविंद के रूप में अभिवर्णित किया है। पाँचवें अध्याय में चिदंबरं, तिरुत्तणि, श्रीकालहस्ति जैसे पुण्यक्षेत्रों के साथ समान स्थायी के रूप में अपने काव्यों में मणिमंटप क्षेत्र मन्नार पोलूर के बारे में भी लिखा हुआ है।

प्रधान मंदिर में द्वारपालकों के बगल में ही सुग्रीव, जटायु के विग्रहों की प्रतिष्ठा की गई है। सन्निधि वीथि में स्वामी मंदिर के सामने भक्तांजनेय स्वामी (भक्त हनुमान) प्रत्येक मंदिर में प्रतिष्ठित किया गया है। दीर्घ मुखमंटप, विशाल महामंटप, कलाविलसित शोभा से देदीप्यमान कल्याणमंटप, प्रचीन शिल्पकला औन्नत्य से बनाये गये प्रधान राजगोपुर, सामने सीके मंटप (उट्लमंटप), मंदिर के पूरब की दिशा में दो एकड विस्तीर्ण पुष्करिणी है। इस पुष्करिणी से इसके पहले बाजा-बजंत्री, छत्र-चामर, वेदमंत्र पठन से, शास्त्रोक्त रीति से पुष्करिणी तीर्थ को ले जाकर हर सुबह स्वामियों के तिरुमंजन किया करते हैं।

इस मंदिर के प्रांगण में मूलविराट के ईशान्य दिशा में एक भूगृह रहता था। इस गुफा के अंदर प्राचीन शिल्पकला नैपुण्य से विराजित तीन शिला द्वार, अंदर से सुंदर सीढियाँ रहकर उसके बाद अंधकारबंधुर मार्ग अगम्यगोचर होने के कारण उस समय के मंदिर के निर्वाहकों ने डर से इस गुफा की परिशोधना (शोध) नहीं करके बिल द्वार को तात्कालिक रूप से बंद किये है।

इस गुफा जांबवंत के निवास स्थल मानकर वहाँ के स्थानिक अंदर जाने का साध्य नहीं कर रहे हैं।

शासन के द्वारा विदित होता है कि १६वीं शताब्दी में इस मंदिर वेंकटगिरि जमींदारों के पालन में था। इस मंदिर की प्रामुख्यता के बारे में जानकर जमींदारों ने १४७७ एकड विस्तीर्ण से पाँच गाँवों का समर्पण किये थे। और भी पता चलता है कि उन दिनों में जमींदारों के आधिपत्य में मन्नार पोलूर तहसीलदार के पर्यवेक्षण में नौ अर्चकगण, नौ घडियों में हर रोज अर्चन करके, निवेदन का समर्पण करते थे, और भी अध्यापक वेद पंडित, भजंत्री, दास-दासीगण, सभी वृत्ति वाले लगभग हजार लोगों से ऊपर इस मंदिर में स्वमी की सेवाएँ करते हुए मंदिर पर आधारित होकर जीवन बिताते थे। वैष्णव भक्ताग्रेस (भक्ताग्रगण्य) पन्निद्धराल्वारों के द्वारा स्तुति किये गए क्षेत्रों में एक क्षेत्र के रूप में बताये जाने की प्रतीति है।

वैष्णवसांप्रदाय के अनुसार यहाँ उत्सव, नित्य, वार, पक्ष, मास, वार्षिक उत्सवों का निर्वहण होता है। हर दिन सुप्रभात सेवा से शुरू होकर एकांतसेवा तक घंटा निवेदन का निर्वहण करते हैं। कई तरह के नैवेद्य तरह-तरह के संदर्भों में स्वामी को निवेदन करते हैं।

कृष्ण होने पर भी राम के रूप में उसमें भी सीताराम के रूप में हनुमान को दर्शन देकर, सत्यभामा, गरुत्मंत दोनों का गर्वभंग करके अपने प्रिय भक्त हनुमान को उन पर रहे अचंचल भक्ति विश्वासों को जगत को विदित होने के जैसे रहे स्थलपुराण से इस मंदिर ख्याति पायी है। गर्वभंग हुए गरुड के आँखों से आँसू बहाने की प्रतिमा स्वामी से ज्यादा ऊँचायी में रहना इस क्षेत्र की विशेषताओं में अत्यंत प्रामुख्यता पायी है।

इतनी प्रसिद्धि एवं विशेष प्राशस्त्य रहे श्री अलघु मल्लारि कृष्णस्वामी का दर्शन करके पुनीत हो जाएँगे।

मई महीने का राशिफल

- डॉ.केशव मिश्र

मेषराशि - मानसिक स्वास्थ्य पर ध्यान देना चाहिए। कारोबार सामान्य रहेगा। विद्यार्थियों के लिए सुअवसर रहेगा परिश्रम का फल मिलेगा। पद-प्रतिष्ठा में उन्नति बढ़ेगी। पारिवारिक सुख प्राप्त होंगे। भूमि-वाहन मकान के क्रय-विक्रय के लिये स्थिति विशेष अच्छी नहीं रहेगी।

वृषभराशि - आर्थिक मामलों में सोच समझकर निर्णय लें। शनि की ढैय्या के प्रभाव बाधा पूर्ण रहेगा। मास के मध्य में यात्रा का योग है। आकस्मिक खर्च होंगे जिससे चिन्ता बढ़ेगी। मासान्त ठीक रहेगा। समस्या सुलझ जायेगी। सन्तान सुख अच्छा रहेगा।

मिथुनराशि - लम्बे समय से चली आ रही परेशानियों का हल निकलेगा। इस मास में यात्रा का योग है जिस कारण धन खर्च होगा। व्यापारिक कार्यों में आंशिक लाभ होंगे। कुटुम्बीजनों से सहयोग प्राप्त होंगे। माता-पिता का सेवा करें लाभप्रद रहेगा।

कर्कराशि - स्वास्थ्य की दृष्टि से उतार-चढ़ाव रहेगा। व्यापारिक लोगों को लाभ प्राप्त होंगे। यात्रा का योग बन रहा है। प्रियजनों का सहयोग मिलेगा। सामाजिक प्रतिष्ठा में वृद्धि होगी। वैवाहिक जीवन में सुख सुविधाओं का लाभ बना रहेगा।

सिंहराशि - संघर्ष के बाद कार्यों में सफलता प्राप्त होगी। लम्बी दूरी की यात्रा होने की सम्भावना है। वाहन से सावधान रहे और कम से कम उपयोग करें। पैसों के लेन-देन में सावधानी रखें। आँख-हाथ-पाँव में विकार उत्पन्न हो सकते हैं सतर्क रहें।

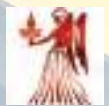

कन्याराशि - शनि की ढैया का प्रभाव रहेगा। हर कार्य में अड़चने आयेंगी। आकास्मिक लाभ योग बनेगा। किसी से अकारण क्षंक्षट न करे कोर्ट-कचहरी का चक्कर लगाना पड़ सकता है व्यर्थ में। अपने वाणी पर नियंत्रण रखें नहीं तो भोगना पड़ेगा।

तुलाराशि - व्यापार में लाभ होगा। आर्थिक उन्नति के लिये प्रयासरत रहें। माता-पिता का स्वास्थ बाधायुक्त हो सकता है। पारिवारिक उलक्षनों से बचे कलह होने की सम्भावना है। मित्रों का सहयोग बना रहेगा।

वृश्चिकराशि - धार्मिक कार्यों में धन व्यय होगा। बाल-बच्चों को शारीरिक पीड़ा तथा अध्ययन-अध्यापन में बाधायें उपस्थित होंगी। जीवन साथी को प्रसन्न रखें मनमुटाव कि सम्भावना है। घर के लोगों से प्रेम बनायें रखें। कारोबार में लाभ होगा। यात्रा के योग बन रहे हैं।

धनुराशि - शनि की साढ़ेसाती का प्रभाव उग्र रहेगा। किसी पर अचानक विश्वास करना नुकसानदायक हो सकता है। उच्चलोगों से सम्पर्क रखना लाभप्रद होगा। आर्थिक स्थितियों में उतार-चढ़ाव होने के कारण मन खिन्न रहेगा, मास के अन्त में स्थिति ठीक हो जायेगा।

मकरराशि - राजनैतिक सम्बन्ध मजबूत होंगे। कारोबारी कार्यों में कुछ बाधाओं एवं संघर्ष के बाद सफलता मिलेगी। समाज में मान-प्रतिष्ठा में वृद्धि होगी। मित्रों से कलह होने कि सम्भावना बन रही है कृपया ध्यानपूर्वक सौहार्दपूर्ण व्यवहार बनाकर रखें।

कुम्भराशि - बाल-बच्चों की अध्ययन-अध्यापन में रुचि बढ़ेगी। अपने क्रोध पर पूर्ण ध्यान रखे वरना भूगतना पर सकता है। अपने से उच्च लोगों के साथ व्यवहार अच्छा रखें। लाभ के अवसर सामान्य रहेगा। किसी भी विषयों पर निर्णय लेने से पहले सोच-विचार करें।

मीनराशि - अपने दैनिक खर्चों पे ध्यान रखे। अधिक धन खर्च होने का योग है। विद्यार्थियों को अधिक परिश्रम करने के बाद फल प्राप्त होंगे। कुछ उलक्षनें हो सकती है। नये कार्य आरम्भ होंगे। भूमि खरीदने के योग बनेंगे। कोर्ट कचहरी के कार्यों में लाभ प्राप्त होंगे।

तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति

सप्तगिरि

(आध्यात्मिक मासिक पत्रिका)

चंदा भरने का पत्र

१. नाम : .....
(अलग-अलग अक्षरों में स्पष्ट लिखें) .....
.....
पिनकोड .....
मोबाइल नं .....

२. वांछित भाषा : ☐ हिन्दी ☐ तमिल ☐ कन्नडा
☐ तेलुगु ☐ अंग्रेजी ☐ संस्कृत

३. वार्षिक / जीवन चंदा :

४. चंदा का पुनरुद्धरण :

(अ) चंदा की संख्या :

(आ) भाषा :

५. पेय रकम :

६. पेय रकम का विवरण :

नकद (एम.आर.टि. नं) दिनांक :

धनादेश (कूपन नं) : दिनांक :

मांगड्राफ्ट संख्या : दिनांक :

प्रांत :

दिनांकः चंदा भरनेवाला का हस्ताक्षर

- वार्षिक चंदा : रु.६०.००, जीवन चंदा : रु.५००-००
- नूतन चंदादार या चंदा का पुनरुद्धार करनेवाले इस पत्र का उपयोग करें।
- इस कूपन को काटकर, पूरे विवरण के साथ इस पते पर भेजें–
- संस्कृत में जीवन चंदा नही है, वार्षिक चंदा रु.६०-०० मात्र है।

प्रधान संपादक, सप्तगिरि कार्यालय, के.टी.रोड,
तिरुपति-५१७ ५०७. (आं.प्र)

नूतन फोन नंबरों की सूचना

चंदादारों और एजेंटों को सूचित किया जाता है कि हमारे कार्यालय का दूरभाष नंबर बदल चुका है और आप नीचे दिये गये नंबरों से संपर्क करें–

कॉल सेंटर नंबर
0877 - 2233333

चंदा भरने की पूछताछ
0877 - 2277777

अर्जित सेवाएँ और आवास के अग्रिम आरक्षण के लिए कृपया इस नंबर से संपर्क करें–

STD Code:
0877

दूरभाष :

कॉल सेंटर नंबर :
2233333, 2277777.

Edited and Published on behalf of T.T.Devasthanams by **Dr.K.Radha Ramana, M.A., M.Phil, Ph.D.,** Chief Editor, T.T.D. and Printed at T.T.D. Press by **Sri R.V.Vijaykumar,** B.A., B.Ed., **Dy.E.O.,** (Publications & Press), T.T.D. Press, Tirupati-517 507.

तिरुमल तिरुपति देवस्थान

नारायणवनम्
श्री कल्याणवेंकटेश्वरस्वामीजी का
ब्रह्मोत्सव

दि. १६-०५-२०१९ से दि. २४-०५-२०१९ तक

१६-०५-२०१९ गुरुवार
दिन - ध्वजारोहण
रात - महाशेषवाहन

१७-०५-२०१९ शुक्रवार
दिन - लघुशेषवाहन
रात - हंसवाहन

१८-०५-२०१९ शनिवार
दिन - सिंहवाहन
रात - मोतीवितानवाहन

१९-०५-२०१९ रविवार
दिन - कल्पवृक्षवाहन
रात - सर्वभूपालवाहन

२०-०५-२०१९ सोमवार
दिन - पालकी में मोहिनी अवतारोत्सव
रात - गरुडवाहन

२१-०५-२०१९ मंगलवार
दिन - हनुमद्वाहन
सायं - वसंतोत्सव
रात - गजवाहन

२२-०५-२०१९ बुधवार
दिन - सूर्यप्रभावाहन
रात - चंद्रप्रभावाहन

२३-०५-२०१९ गुरुवार
दिन - रथ-यात्रा
रात - अश्ववाहन

२४-०५-२०१९ शुक्रवार
दिन - चक्रस्नान
रात - ध्वजावरोहण

SAPTHAGIRI (HINDI) ILLUSTRATED MONTHLY
Published by Tirumala Tirupati Devasthanams 25-04-2019
Regd. with the Registrar of Newspapers under "RNI" No.10742, Postal Regd.No.TRP/11 - 2018-2020
Licensed to post without prepayment No.PMGK/RNP/WPP-04/2018-2020

तिरुपति
श्री गोविंदराजस्वामीजी का ब्रह्मोत्सव

दि. ११.०५.२०१९ से दि. १९.०५.२०१९ तक